क़ुरआन कैसे पढ़ें?

मौलाना सैयद अबुल-आला मौदूदी (रह०)

हिन्दी तर्जमा

मौलाना नसीम अहमद ग़ाज़ी फ़लाही

फ़ेहरिस्त

शब्द	4
द्दिमा	5
आन का अन्दाज़े-बयान और बात करने का तरीक़ा	5
आन में क्या है?	11
मंज़र (पृष्ठभूमि)	12
आती हालत में क़ुरआन	13
क़ा में उतरनेवाली सूरतों का पसमंज़र	14
ना में उतरनेवाली सूरतों का पसमंज़र	16
आन का अपना ख़ास अन्दाज़ और उसकी ज़रूरत	17
मूनों को बार-बार बयान करने की ज़रूरत	18
आन की तरतीब उतरने की तरतीब के मुताबिक़ न होने का सबब	18
आन की हिफ़ाज़त	21
आन पढ़ने में यकसानियत	22
आन से फ़ायदा उठाने के लिए कुछ ज़रूरी सुझाव	23
सुब से पाक होकर क़ुरआन को पढ़ें	24
आन को बार-बार पढ़ें	24
आन से मुकम्मल हिदायत के लिए ऐसा भी करें	25
आन की रूह से वाक़िफ़ होने का तरीक़ा	26
आन की तालीम हमेशा के लिए है	27
उलझन और उसका हल	29
आनी हुक्मों के अलग-अलग मतलब	30

☆☆☆

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

'अल्लाह के नाम से जो बड़ा मेहरबान और रहम करनेवाला है।'

दो शब्द

यह किताब हक़ीक़त में मौलाना सैयद अबुल-आला मौदूदी (रह०) मशहूर क़ुरआन मजीद की तफ़सीर 'तफ़हीमुल-क़ुरआन' का मुक़द्दिमा है। इ बयान की गई बातों की अहमियत की वजह से इसे अलग से किताब शक्ल में शाया किया जा रहा है।

मुहतरम मुसन्निफ़ ने इस मुक़द्दिमे में उन्वान और ज़ैली उनवान नहीं थे लेकिन इसकी ज़रूरत देखते हुए हमने उनवान और ज़ैली उनवान मज़ के मुताबिक़ दे दिए हैं जिससे इसकी अहमियत और बढ़ गई है।

इस मुक़द्दिमे में क़ुरआन और क़ुरआन की पेश की हुई तफ़सीर के में कुछ बातें बताने के अलावा क़ुरआन के बारे में उठनेवाले कई सवालों बहस की गई है, जैसे कि क़ुरआन कैसे नाज़िल हुआ? क़ुरआन में एक को बार-बार क्यों बयान किया गया है? इस बात की क्या अहमियत क़ुरआन मुकम्मल किताब की शक्ल में कब जमा हुआ और इसको जमा व और तरतीब देनेवाला कौन है? क़ुरआन को पढ़ते और उसका मुताला व वक़्त किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए? वग़ैरा।

हमें उम्मीद है कि क़ुरआन मजीद के तआरुफ़ और उसके बारे में उ वाले बहुत-से सवालों का इत्मीनान-बख़्श जवाब इस किताब में पढ़नेवालों मिल जाएगा और वे इसे पढ़कर क़ुरआन मजीद से ज़्यादा-से-ज़्यादा फ़ा उठा सकेंगे।

इस किताब के हिन्दी ज़बान में दो तर्जमे शाया किए गए हैं — **'क़ुरआन कैसे पढ़ें?'** के नाम से जो कि बहुत ही आसान ज़बान में है **दूसरा** 'क़ुरआन : कुछ आवश्यक जानकारियाँ' के नाम से, जो कि ख़ा **हिन्दी** ज़बान में है। लोग अपनी-अपनी पसन्द और ज़रूरत के मुताबिक़ इ से कोई भी किताब पढ़ सकते हैं।

—नसीम ग़ाज़ी फ़ला

(सेक्रेट्री इस्लामी साहित्य ट्र

मुक़द्दिमा

इन गुज़ारिशों के उनवान में लफ़्ज़ मुक़द्दिमा (भूमिका) देखकर किसी को लतफ़हमी न हो कि मैं क़ुरआन की भूमिका लिख रहा हूँ। यह क़ुरआन ीं *तफ़हीमुल-क़ुरआन* की भूमिका है और मेरे सामने इसको लिखने के दो ः हैं—

एक यह कि क़ुरआन को पढ़ने से पहले पढ़नेवाला एक आम आदमी उन से अच्छी तरह वाक़िफ़ हो जाए, जिनको शुरू ही में समझ लेने से क़ुरआन मझने का रास्ता आसान हो जाता है; वरना ये बातें पढ़ने के दौरान में ार खटकती हैं और कई बार सिर्फ़ इनको न समझने की वजह से आदमी तक क़ुरआन के मानी की सतह ही पर घूमता रहता है, गहराई में उतरने से रास्ता नहीं मिलता।

दूसरा यह कि उन सवालों का जवाब पहले ही दे दिया जाए, जो क़ुरआन मझने की कोशिश करते वक़्त आम तौर से लोगों के ज़ेहन में पैदा हुआ हैं। मैं इस भूमिका में सिर्फ़ उन सवालों का जवाब दूँगा, जो ख़ुद मेरे में शुरू-शुरू में पैदा हुए थे या जिनसे बाद में मेरा वास्ता पड़ा। इनके ा अगर कुछ और सवाल भी जवाब देने के लिए बाक़ी रह गए हों, तो मुझे बाख़बर किया जाए; उनका जवाब अगर अल्लाह ने चाहा तो अगले न में इस भूमिका में शामिल कर दिया जाएगा।

ान का अन्दाज़े-बयान और बात करने का तरीक़ा

आम तौर पर हम जिन किताबों के पढ़ने के आदी हैं, उनमें एक तयशुदा न (विषय) पर मालूमात, ख़यालात और दलीलों को लिखने की एक ख़ास ब के साथ लगातार बयान किया जाता है। इसी वजह से जब एक ऐसा ी जो क़ुरआन से अभी तक अजनबी रहा है पहली बार इस किताब को का इरादा करता है, तो वह यह उम्मीद लिए हुए आगे बढ़ता है कि ाब' होने की हैसियत से इसमें भी आम किताबों की तरह पहले मौज़ूअ य) तय होगा, फिर असूल मज़मून को अबवाब (अध्यायों) और फ़सलों ों) में बाँटकर एक तरतीब के साथ एक-एक पहलू पर बात की जाएगी, इसी तरह ज़िन्दगी के एक-एक पहलू को भी अलग-अलग लेकर उसके में अहकाम और हिदायतें सिलसिलेवार लिखी होंगी; लेकिन जब वह किताब कर पढ़ना शुरू करता है, तो यहाँ उसे अपनी उम्मीद के बिलकुल ख़िलाफ़ दूसरे ही अन्दाज़े-बयान से वास्ता पड़ता है, जिससे वह अब तक बिलकुल

नावाक़िफ़ था। यहाँ वह देखता है कि अक़ीदे के बारे में बातें, अख़
हिदायतें, शरई हुक्म (धर्म-विधान सम्बन्धी आदेश), पैग़ाम और नसीहत,
(शिक्षा-सामग्री), तनक़ीद (आलोचना), मलामत, डरावा, ख़ुशख़बरी, त
दलीलें, गवाहियाँ, तारीख़ी क़िस्से, कायनात में फैली निशानियों की तरफ़
बार-बार एक दूसरे के बाद आ रहे हैं। एक ही मज़मून और बात मुख़्
तरीक़ों से मुख़्तलिफ़ अलफ़ाज़ में दोहराई जा रही है। एक मज़मून के बाद
और दूसरे के बाद तीसरा अचानक शुरू हो जाता है, बल्कि एक मज़मू
बीच में दूसरा मज़मून एकाएक आ जाता है; जिससे बात कही जा रही
और बात कहनेवाला बार-बार बदलते हैं और बात का रुख़ रह-रहकर मुख़्
सिम्तों में फिरता है; बाबों और फ़सलों की तक़सीम का कहीं निशान
तारीख़ (इतिहास) है तो तारीख़ लिखने के अन्दाज़ में नहीं; फ़लसफ़ा (
और फ़ितरत से परे की बातें हैं, तो मंतिक़ (तर्क) और फ़लसफ़े की ज़बा
नहीं; इनसान और माद्दी चीज़ों का बयान है, तो भौतिक विज्ञान के तरीक़े
नहीं; तमद्दुन (सभ्यता) व सियासत और मईशत (अर्थ) व सामाजिकत
बातें हैं, तो सामाजिक विज्ञान के तरीक़े पर नहीं; क़ानून और उसके हुक्म
बयान है, तो क़ानूनदानों के ढंग से बिलकुल अलग; अख़लाक़ की तालीम है
अख़लाक़ के फ़लसफ़े के पूरे लिट्रेचर से उसका अन्दाज़ जुदा—यह सब
'किताब' के बारे में अपने पिछले तसव्वुर के ख़िलाफ़ पाकर आदमी परेशा
जाता है। उसे ऐसा महसूस होने लगता है कि यह एक बिखरा हुआ कला
जिसमें न कोई तरतीब है और न कोई आपसी रब्त, जो शुरू से लेकर अ
तक बेशुमार छोटे-बड़े मुख़्तलिफ़ बोलों पर मुश्तमिल है, मगर जिसे मुसत
इबारत की शक्ल में लिख दिया गया है। मुख़ालिफ़ाना नज़रिए से देखने
इसी पर तरह-तरह के एतिराज़ और शक व शुब्हों की बुनियाद रख देता है
हिमायती नज़रिया रखनेवाला कभी मानी की तरफ़ से आँखें बन्द करके
और शुब्हों से बचने की कोशिश करता है। कभी इस ज़ाहिरी बेतरतीबी की
वजहें बताकर अपने दिल को समझा लेता है, कभी बनावटी तरीक़े से रब्त
ताल्लुक़ तलाश करके अजीब-अजीब नतीजे निकालता है और कभी इस
को क़बूल कर लेता है कि क़ुरआन में छोटे-छोटे टुकड़ों में आज़ादाना तौर
बात कही गई है, जिसकी वजह से हर आयत अपने मौक़े (सन्दर्भ) से
होकर ऐसे मानी का मजमूआ बन जाती है, जो कहनेवाले के मक़सद
ख़िलाफ़ होती है। फिर एक किताब को अच्छी तरह समझने के लिए ज़रू
कि पढ़नेवाले को उसका मौज़ूअ (विषय) मालूम हो। उसके मक़सद और
और उसके मर्कज़ी मज़मून (केन्द्रीय विषय) का इल्म हो; उसके अन्दाज़े-ब
की जानकारी हो; उसकी इस्तिलाही ज़बान और उसके ख़यालात बयान करन

ा तरीक़े से वाक़फ़ियत हो और उसके बयान अपनी ज़ाहिरी इबारत के पीछे
हालात और मामलों से ताल्लुक़ रखते हों, वे भी नज़रों के सामने रहें।
ा तौर पर जो किताबें हम पढ़ते हैं, उनमें ये चीज़ें आसानी से मिल जाती
इसलिए उनके मज़मूनों की तह तक पहुँचने में हमें कोई बड़ी परेशानी नहीं
ो। मगर क़ुरआन में यह उस तरह नहीं मिलती जिस तरह हम दूसरी
ाबों में उन्हें पाने के आदी रहे हैं। इसलिए किताब पढ़नेवाले एक आम
मी की-सी ज़ेहनियत लेकर जब हममें का कोई आदमी क़ुरआन का मुताला
करता है, तो उसे किताब के मौज़ूअ, मक़सद और मर्कज़ी मज़मून का पता
मिलता, उसका अन्दाज़े-बयान और उसके ख़यालात और बयान करने का
क़ा उसे कुछ अजनबी-सा जान पड़ता है और बहुत-सी जगहों पर उसकी
रतों और जुमलों का मौक़ा व महल भी उसकी निगाहों से ओझल रहता है।
जा यह होता है कि अलग-अलग आयतों में हिकमत के जो मोती बिखरे हुए
उनसे कम या ज़्यादा फ़ायदा उठाने के बावजूद एक आदमी अल्लाह के
ाम की असली रूह तक पहुँचने से महरूम रह जाता है और किताब का
ा हासिल करने के बजाय उसको किताब की सिर्फ़ कुछ बिखरी बातों और
दों पर ही बस कर लेना पड़ता है; बल्कि ज़्यादातर लोग जो क़ुरआन का
ला करके शक और शुब्हों के शिकार हो जाते हैं, उनके भटकने की एक
ह यह भी है कि किताब को समझने की इन ज़रूरी शुरुआती बातों से
ाक़िफ़ रहते हुए जब वे क़ुरआन को पढ़ते हैं तो उसके पन्नों पर मुख़्तलिफ़
मून उन्हें बिखरे हुए नज़र आते हैं; बहुत-सी आयतों का मतलब उनपर नहीं
ाता; बहुत-सी आयतों को देखते हैं कि अपने आपमें हिकमत के नूर से
मगा रही हैं, मगर इबारत के मौक़ा और महल में बिलकुल बेजोड़ महसूस
ी हैं। बहुत-सी जगहों पर मतलब समझने और बयान के तरीक़े से
ाक़िफ़ होना उन्हें असली मतलब से हटाकर किसी और ही तरफ़ ले जाता
और अकसर मौक़ों पर पसमंज़र (पृष्ठभूमि) का सही इल्म न होने से भारी
तफ़हमियाँ पैदा हो जाती हैं।

क़ुरआन किस तरह की किताब है? इसके उतरने की कैफ़ियत और इसकी
ीब की शक्ल क्या है? इसकी बात और मौज़ूअ क्या है? इसकी सारी बहस
स मक़सद के लिए है? किस मर्कज़ी मज़मून के साथ इसके ये बेशुमार और
ाग-अलग तरह के मज़मून ताल्लुक़ रखते हैं? दलील का ढंग और बयान का
ा तरीक़ा इसने अपने मक़सद के लिए इख़्तियार किया है, ये और ऐसे ही
ु दूसरे ज़रूरी सवाल हैं जिनका जवाब साफ़ और सीधे तरीक़े से अगर
दमी को शुरू में ही मिल जाए तो वह बहुत-से ख़तरों से बच सकता है और
के लिए सोचने-समझने और ग़ौर करने की राहें खुल सकती हैं। जो आदमी

क़ुरआन में किताबी तरतीब तलाश करता है, वहाँ उसे न पाकर किता
पन्नों में भटकने लगता है। उसकी परेशानी की अस्ल वजह यही है वि
क़ुरआन के मुताले की इन शुरुआती बातों से नावाक़िफ़ होता है। वह
गुमान के साथ मुताला शुरू करता है कि वह मज़हब के मौज़ूअ पर
'किताब' पढ़ने चला है। 'मज़हब का मौज़ूअ' और 'किताब', इन दोनं
तसव्वुर उसके ज़ेहन में वही होता है, जो आम तौर से 'मज़हब' और 'कि
के बारे में ज़ेहनों में पाया जाता है। मगर जब वहाँ उसे अपनी ज़ेहनी त
से बिलकुल ही अलग एक चीज़ मिलती है, तो वह अपने अन्दर उसके
दिलचस्पी पैदा नहीं कर पाता और मज़मून का सिरा हाथ न आने की वज
लाइनों में इस तरह भटकना शुरू कर देता है जैसे वह एक अजनबी मुस
है, जो किसी नए शहर की गलियों में खो गया है। उसे इस तरह के भट
और गुम होने से बचाया जा सकता है, अगर उसे पहले ही यह बता दिया
कि जिस किताब को पढ़ने जा रहा है, वह पूरी दुनिया के लिट्रेचर में उ
तरह की एक ही किताब है। यह किताब दुनिया की सारी किताबों से बिल
अलग तरीक़े पर तैयार हुई है, अपने मौज़ूअ, मज़मून और तरतीब के लिहा
भी यह एक निराली चीज़ है, इसलिए तुम्हारे ज़ेहन का वह 'किताबी' साँच
अब तक के किताबें पढ़ने से बना है, इस किताब के समझने में तुम्हारी मद
करेगा, बल्कि उल्टा रुकावट डालेगा। इसे समझना चाहते हो तो अपने पह
बने हुए गुमानों और अटकलों को दिमाग़ से निकालकर इसकी अन
ख़ुसूसियतों से वाक़फ़ियत हासिल करो।

इस सिलसिले में सबसे पहले आदमी को क़ुरआन की हक़ीक़त से वा
हो जाना चाहिए। वह चाहे उसपर ईमान लाए या न लाए, मगर इस किताब
समझने के लिए उसे शुरुआती नुक्ते के तौर पर इसकी वही हक़ीक़त मा
होगी, जो ख़ुद इसने और इसके पेश करनेवाले (मुहम्मद सल्ल॰) ने बता
और वह यह है –

1.सारे जहान के ख़ुदा ने जो सारी कायनात का पैदा करनेवाला, मालिक
हाकिम है, अपनी निहायत फैली हुई सल्तनत के इस हिस्से में जिसे ज़
कहते हैं, इनसान को पैदा किया; उसे जानने और सोचने-समझने की क़ु
दीं। भले और बुरे में फ़र्क़ करने की सलाहियत दी। चुनाव और इरादे
आज़ादी दी। चीज़ों के इस्तेमाल के इख़्तियार दिए और बड़ी हद तक
तरह की ख़ुद इख़्तियारी (स्वाधिकार, Autonomy) देकर उसे ज़मीन में अ
ख़लीफ़ा (नायब, प्रतिनिधि) बनाया।

2. इस मनसब और ज़िम्मेदारी पर इनसान को मुक़र्रर करते वक़्त सारे जहान
ख़ुदा ने अच्छी तरह उसके कान खोलकर यह बात उसके दिमाग़ में डाल

तुम्हारा और तमाम जहान का मालिक, इबादत के लायक़ और हाकिम मैं मेरी इस सल्तनत में न तुम ख़ुदमुख़्तार हो, न किसी दूसरे के बन्दे हो और मेरे सिवा कोई तुम्हारी इताअत व बन्दगी और इबादत का हक़दार है। या की यह ज़िन्दगी, जिसमें तुम्हें इख़्तियार देकर भेजा जा रहा है, असल तुम्हारे लिए एक इम्तिहान की मुद्दत है, जिसके बाद तुम्हें मेरे पास वापस ना होगा और मैं तुम्हारे काम की जाँच करके फ़ैसला करूँगा कि तुममें से न इम्तिहान में कामयाब रहा है और कौन नाकाम। तुम्हारे लिए सही रवैया है कि मुझे अपना एक अकेला माबूद और हाकिम तसलीम करो। जो ायत मैं भेजूँ, उसके मुताबिक़ दुनिया में काम करो और दुनिया को तहानगाह समझते हुए इस एहसास के साथ ज़िन्दगी बसर करो कि तुम्हारा ुल मक़सद मेरे आख़िरी फ़ैसले में कामयाब होना है। इसके बरख़िलाफ़ हारे लिए हर वह रवैया ग़लत है, जो इससे अलग हो। अगर पहला रवैया ख़्तियार करोगे (जिसे इख़्तियार करने के लिए तुम आज़ाद हो) तो तुम्हें या में अम्न और इत्मीनान हासिल होगा और जब मेरे पास पलटकर ओगे, तो मैं तुम्हें हमेशा रहनेवाली राहत और ख़ुशी का वह घर दूँगा सका नाम जन्नत है। और अगर दूसरे किसी रवैये पर चलोगे (जिसपर ने के लिए भी तुमको आज़ादी है) तो दुनिया में तुमको फ़साद और बेचैनी मज़ा चखना होगा और दुनिया से गुज़रकर आख़िरत की दुनिया में जब ओगे, तो हमेशा रहनेवाले दुख और मुसीबत के उस गढ़े में फेंक दिए ओगे जिसका नाम दोज़ख़ है।

ह समझाने के बाद कायनात के मालिक ने इनसानों को ज़मीन में जगह दी र इस जाति के सबसे पहले लोगों (आदम और हव्वा) को वह हिदायत भी दी, जिसके मुताबिक़ उन्हें और उनकी औलाद को ज़मीन में काम करना । ये सबसे पहले इनसान जिहालत और अंधेरे की हालत में पैदा नहीं हुए बल्कि ख़ुदा ने ज़मीन पर उनकी ज़िन्दगी की शुरुआत पूरी रौशनी में की । वे हक़ीक़त से वाक़िफ़ थे। उन्हें उनकी ज़िन्दगी का क़ानून बता दिया ा था। उनकी ज़िन्दगी गुज़ारने का तरीक़ा ख़ुदा की इताअत और फ़रमाँ-दारी (इस्लाम) था। वे अपनी औलाद को यही बात सिखाकर गए कि वे दा की फ़रमाँबरदार (मुसलिम) बनकर रहें। लेकिन बाद की सदियों में रे-धीरे इनसान ज़िन्दगी के इस सही तरीक़े (दीन और धर्म) से हटकर ख़्तलिफ़ क़िस्म के ग़लत रवैयों की तरफ़ चल पड़े। उन्होंने ग़फ़लत और परवाही से उसको गुम भी किया और शरारत से उसकी शक्ल भी बिगाड़ ली। उन्होंने ख़ुदा के साथ ज़मीन और आसमान की मुख़्तलिफ़ इनसानी र ग़ैर-इनसानी, ख़याली और माद्दी चीज़ों को ख़ुदा का शरीक ठहरा लिया।

उन्होंने ख़ुदा के दिए हुए हक़ीक़त के इल्म में तरह-तरह के अंधविश्वासों
नज़रियों और फ़लसफ़ों की मिलावट करके बेशुमार मज़हब (पंथ) पैदा
लिए। उन्होंने ख़ुदा के मुक़र्रर किए हुए तमद्दुन और अख़लाक़ के हक़
इनसाफ़ पर बने हुए उसूलों (शरीअत) को छोड़कर या बिगाड़कर अपने
की ख़ाहिशों और अपने तास्सुबात (अनुचित पक्षपातों) के मुताबिक़ ज़िन्
के ऐसे क़ानून गढ़ लिए, जिनसे ख़ुदा की ज़मीन ज़ुल्म से भर गई।

4. ख़ुदा ने जो महदूद ख़ुदइख़्तियारी इनसान को दी थी उसके साथ यह
मेल नहीं खाती थी कि वह ख़ालिक़ होने के इख़्तियार का इस्तेमाल करके
बिगड़े हुए इनसानों को ज़बरदस्ती सही रवैये की तरफ़ मोड़ देता और उ
दुनिया में काम करने के लिए जो मुहलत इनके लिए और इनकी मुख़्त
क़ौमों के लिए तय की थी, उसके साथ यह बात भी मेल नहीं खाती थी
इस बग़ावत के पैदा होते ही वह इनसानों को हलाक कर देता। फिर जो
दुनिया और इनसानों की पैदाइश के दिन से उसने अपने ज़िम्मे लिया था,
यह था कि इनसान की ख़ुदइख़्तियारी को बाक़ी रखते हुए उसके अमल
मुहलत के दौरान में उसकी रहनुमाई का इन्तिज़ाम वह करता रहेगा।
लिए अपनी इस ख़ुद डाली हुई ज़िम्मेदारी को अदा करने के लिए उ
इनसानों ही में से ऐसे आदमियों को इस्तेमाल करना शुरू किया जो उस
ईमान रखनेवाले और उसकी मर्ज़ी की पैरवी करनेवाले थे। उसने उन
अपना नुमाइन्दा बनाया; अपने पैग़ाम उनके पास भेजे; उनको हक़ीक़त
इल्म दिया; उन्हें ज़िन्दगी का सही क़ानून दिया और उन्हें इस काम पर लग
कि इनसानों को उसी सीधे रास्ते की तरफ़ पलटने की दावत दें, जिससे वे
गए थे।

5. ये पैग़म्बर मुख़्तलिफ़ क़ौमों और मुल्कों में उठते रहे। हज़ारों साल तक उ
आने का सिलसिला चलता रहा। हज़ारों की तादाद में वे भेजे गए। उन
का एक ही दीन था यानी वह सही रवैया जो पहले दिन ही इनसान को
दिया गया था। वे सब एक ही हिदायत की पैरवी करनेवाले थे यानी अख़ल
और तमद्दुन के वे उसूल जो दुनिया की पैदाइश से लेकर हमेशा-हमेशा
उसूल हैं। ये उसूल शुरू ही में इनसान के लिए तय कर दिए गए थे और
सब का एक ही मिशन था यानी यह कि इस दीन और इस हिदायत की त
इनसानों को बुलाएँ, फिर जो लोग इस पैग़ाम को क़बूल कर लें, उन
जोड़कर एक ऐसा गरोह बनाएँ जो ख़ुद अल्लाह के क़ानून का पाबन्द हो
दुनिया में अल्लाह के क़ानून की इताअत क़ायम करने और इस क़ानून
ख़िलाफ़वर्ज़ी रोकने के लिए जिद्दोजुहद करें। इन पैग़म्बरों ने अपने-अपने
में अपने इस मिशन को पूरी ख़ूबी के साथ अदा किया, मगर हमेशा यही ह

कि इनसानों की एक बड़ी तादाद तो उनके पैग़ाम को क़बूल करने पर ादा ही नहीं हुई और जिन्होंने उसे क़बूल करके फ़रमाँबरदार गरोह लिम उम्मत) की हैसियत इख़्तियार की, वे धीरे-धीरे ख़ुद बिगड़ते चले यहाँ तक कि उनमें से कुछ गरोह ख़ुदा की हिदायत को बिलकुल ही गुम बैठे और कुछ ने ख़ुदा की हिदायतों को अपनी तब्दीलियों और मिलावटों बिगाड़कर रख दिया।

ख़िर में सारे जहान के ख़ुदा ने अरब की ज़मीन पर मुहम्मद (सल्ल॰) को काम के लिए भेजा, जिसके लिए पिछले नबी आते रहे थे। उन्होंने आम ानों के सामने भी अपना पैग़ाम पेश किया और पिछले नबियों के बिगड़े पैरूओं के सामने भी। सब को सही रवैये की तरफ़ बुलाना, सबको फिर ख़ुदा की हिदायत पहुँचा देना और जो इस पैग़ाम और हिदायत को क़बूल उन्हें एक ऐसी उम्मत और गरोह बना देना उनका काम था जो एक ख़ुद अपनी ज़िन्दगी का निज़ाम ख़ुदा की हिदायत पर क़ायम करे और ी तरफ़ दुनिया की इस्लाह के लिए जिद्दोजुहद करे—इसी दावत और यत की किताब यह क़ुरआन है जो अल्लाह ने मुहम्मद (सल्ल॰) पर ी।

ान में क्या है?

क़ुरआन की इस हक़ीक़त को जान लेने के बाद पढ़नेवालों के लिए यह ा आसान हो जाता है कि इस किताब का मौज़ूअ क्या है, इसका मर्कज़ी ा क्या है, और इसका मक़सद क्या है।

क़ुरआन इनसान के बारे में बात करता है; इस पहलू से कि हक़ीक़त में न का भला और उसका बुरा किस चीज़ में है।

इसका मर्कज़ी मज़मून यह है कि ज़ाहिरी शक्ल को देखकर या गुमान और ल की बुनियाद पर जो राय बना ली या ख़ाहिश की ग़ुलामी के सबब से न ने ख़ुदा और कायनात के निज़ाम, अपनी हस्ती और अपनी दुनियवी ी के बारे में जो नज़रिए क़ायम किए हैं और उन नज़रियों की बुनियाद ी रवैये इख़्तियार कर लिए हैं, वे सब हक़ीक़त की नज़र से ग़लत और के लिहाज़ से ख़ुद इनसान ही के लिए तबाहकुन हैं। हक़ीक़त वह है जो न को ख़लीफ़ा (प्रतिनिधि) बनाते वक़्त ख़ुदा ने ख़ुद बता दी थी और इस त के मुताबिक़ इनसान के लिए वही रवैया सही और कामयाब है, जिसे पन्नों में हम 'सही रवैये' के नाम से बयान कर चुके हैं।

उसका मक़सद इनसान को उस सही रवैये की तरफ़ बुलाना और अल्लाह ह हिदायत को वाज़ेह तौर पर पेश करना है, जिसे इनसान अपनी ग़फ़लत ा करता और अपनी शरारत से उसकी शक्ल बिगाड़ता रहा है।

इन तीन बुनियादी बातों को दिमाग़ में रखकर कोई आदमी क़ुरआन देखे तो उसे साफ़ नज़र आएगा कि यह किताब कहीं भी अपने मौज़ूअ (वि अपने मक़सद और मर्कज़ी मज़मून (केन्द्रीय विषय) से बाल बराबर भी हटी है। शुरू से लेकर आख़िर तक उसके अलग-अलग और तरह-तर मज़मून उसके मर्कज़ी मज़मून के साथ इस तरह जुड़े हुए हैं जैसे छोटे रंग-बिरंग के हीरे-मोती हार की लड़ी में पिरोए हुए होते हैं। वह ज़मी आसमान की बनावट पर, इनसान की पैदाइश पर, कायनात की निशानिय देखने पर और पिछली क़ौमों के वाक़िओं पर बात करता है; मुख़्तलिफ़ क़ौम अक़ीदों, अख़लाक़ और कामों पर तनक़ीद (टिप्पणी) करता है; वे बातें मामले जो फ़ितरत से परे हैं और इनसानों की पकड़ से बाहर हैं, उनके ब हक़ीक़त से बाख़बर करता है और बहुत-सी दूसरी चीज़ों का ज़िक्र भी करत मगर इसलिए नहीं कि उसे माद्दी दुनिया, या इतिहास या फ़लसफ़े या दूसरे फ़न (कला) की तालीम देनी है, बल्कि इसलिए कि उसे हक़ीक़त के में इनसान की ग़लतफ़हमियाँ दूर करनी हैं; असल हक़ीक़त लोगों के दिल दिमाग़ में बिठानी है। हक़ीक़त के ख़िलाफ़ रवैये की ग़लती और उसके अंजाम को वाज़ेह करना है और उस रवैये की तरफ़ बुलाना है, जो हक़ीक़ मुताबिक़ और अच्छे नतीजेवाला है। यही वजह है कि वह हर चीज़ का सिर्फ़ उस हद तक और उस अन्दाज़ में करता है, जो उसके मक़सद के ज़रूरी है। हमेशा इन चीज़ों का ज़िक्र ज़रूरत भर करने के बाद ग़ैर-ज़ तफ़सीलों को छोड़कर अपने मक़सद और मर्कज़ी मज़मून की तरफ़ पलट है और उसका पूरा बयान बड़ी ही यकसानी के साथ 'पैग़ाम' की धुरी घूमता रहता है।

पसमंज़र (पृष्ठभूमि)

क़ुरआन के अन्दाज़े-बयान, उसकी तरतीब और उसके बहुत-से मज़ को आदमी उस वक़्त तक अच्छी तरह नहीं समझ सकता जब तक कि नाज़िल होने की कैफ़ियत को भी अच्छी तरह न समझ ले।

यह क़ुरआन इस तरह की किताब नहीं है कि अल्लाह ने एक ही वक़ इसे लिखकर मुहम्मद (सल्ल॰) को दे दिया हो और कह दिया हो कि इसे करके लोगों को ज़िन्दगी के एक ख़ास तरीक़े की तरफ़ बुलाएँ। यह इस की किताब भी नहीं है कि इसमें लिखने के अन्दाज़ पर किताब के मौज़ूअ मर्कज़ी मज़मून के बारे में बात की गई हो। यही वजह है कि इसमें न तरतीब पाई जाती है, जो लिखी हुई किताब में होती है और न इसमें कि जैसा तरीक़ा और ढंग पाया जाता है। असल में यह ऐसी किताब है कि अ ने अरब के शहर मक्का में अपने एक बन्दे को पैग़म्बरी की ख़िदमत के

और उसे हुक्म दिया कि अपने शहर और अपने क़बीले (क़ुरैश) से पैग़ाम ाने की शुरुआत करे। यह काम शुरू करने के लिए आग़ाज़ में जिन यतों की ज़रूरत थीं, सिर्फ़ वही दी गईं और उनमें ज़्यादातर तीन मज़मून थे—

पैग़म्बर को इस बात की तालीम कि वह ख़ुद अपने आपको इस बड़े काम के लिए किस तरह तैयार करे और किस ढंग से काम करे।

हक़ीक़त के बारे में इब्तिदाई मालूमात और हक़ीक़त के बारे में उन ग़लतफ़हमियों का मोटे तौर पर रद्द जो आसपास के लोगों में पाई जाती थीं, जिनकी वजह से उनका रवैया ग़लत हो रहा था।

सही रवैये की तरफ़ बुलाना और ख़ुदा की हिदायत के उन अख़लाक़ के बुनियादी उसूलों का बयान, जिनकी पैरवी में इनसान के लिए कामयाबी और ख़ुशनसीबी है।

आती हालत में क़ुरआन

शुरू-शुरू के ये पैग़ाम दावत की शुरुआत को सामने रखते हुए कुछ -छोटे मुख़्तसर बोलों पर सम्मिलित होते थे, जिनकी ज़बान निहायत ा-सुथरी, निहायत मीठी, निहायत असरदार और मुख़ातब क़ौम के ज़ौक़ के बिक़ बेहतरीन अदबी रंग लिए होती थी; ताकि दिलों में ये बोल तीर की उतर जाएँ, कान ख़ुद-ब-ख़ुद उनके तरन्नुम की वजह से उनकी तरफ़ ज्जेह हों और उनके निहायत मुनासिब और दुरुस्त होने की वजह से ज़बानें ख़्तयार होकर उन्हें दोहराने लगें। फिर उन बोलों में मक़ामी रंग बहुत ज़्यादा हालाँकि बयान तो की जा रही थीं आलमगीर सच्चाइयाँ, मगर उनके लिए लें, गवाहियाँ और मिसालें उस सबसे क़रीबी माहौल से ली गई थीं, जिससे तब लोग अच्छी तरह वाक़िफ़ थे। उन्हीं का इतिहास, उन्हीं की रिवायतें, ं की रोज़मर्रा देखने और तजुर्बे में आनेवाली निशानियाँ और उन्हीं के दे, अख़लाक़ और समाज से ताल्लुक़ रखनेवाली ख़राबियों पर सारी गुफ़्तगू ताकि वे उससे असर ले सकें।

दावत का यह शुरुआती मरहला तक़रीबन चार-पाँच साल तक जारी रहा इस मरहले में नबी (सल्ल०) की तबलीग़ (प्रचार-प्रसार) का असर तीन तों में ज़ाहिर हुआ—

कुछ भले आदमी इस पैग़ाम को क़बूल करके मुसलिम (फ़रमाँबरदार) गरोह बनने के लिए तैयार हो गए।

एक बड़ी तादाद जिहालत या ख़ुदग़र्ज़ी या बाप-दादा के तरीक़े की वजह से मुख़ालफ़त पर आमादा हो गई।

मक्के और क़ुरैश की हदों से निकलकर इस नए पैग़ाम की आवाज़ उनके मुक़ाबले में कुछ ज़्यादा बड़े इलाक़े में पहुँचने लगी।

मक्का में उतरनेवाली सूरतों का पसमंज़र

यहाँ से उस पैग़ाम का दूसरा मरहला शुरू होता है। इस मरहले में इ
की इस तहरीक (आन्दोलन) और पुरानी जिहालत के बीच एक सख़्त जा
कश-म-कश शुरू हुई, जिसका सिलसिला आठ-नौ साल तक चलता रह
सिर्फ़ मक्का में, न सिर्फ़ क़ुरैश के क़बीले में, बल्कि अरब के ज़्यादातर हिस्
भी जो लोग पुरानी जाहिलियत को बाक़ी रखना चाहते थे, वे इस तहरीक
ताक़त के ज़ोर पर मिटा देने पर तुल गए। उन्होंने इसे दबाने के लिए
चालें चल डालीं; झूठा प्रोपगंडा किया; इल्ज़ामों, शक और शुब्हों और एति
की बौछार की; आम लोगों के दिलों में तरह-तरह की ग़लतफ़हमियाँ पैदा
अनजान लोगों को नबी (सल्ल॰) की बात सुनने से रोकने की कोशिशें
इस्लाम क़बूल करनेवालों पर निहायत वहशियाना ज़ुल्मो-सितम ढाए; उ
मुआशी और समाजी बॉयकाट किया और उन्हें इतना सताया कि उन
बहुत-से लोग दो बार अपने घर छोड़कर हब्शा (इथोपिया) की तरफ़ हिजरत
जाने पर मजबूर हुए और आख़िरकार तीसरी बार उन सबको मदीना की
हिजरत करनी पड़ी। लेकिन इस सख़्त और रोज़ बढ़ती मुख़ालफ़त के बा
भी यह तहरीक फैलती चली गई। मक्का में कोई ख़ानदान और कोई घर
न रहा जिसके किसी न किसी आदमी ने इस्लाम क़बूल न कर लिया
इस्लाम के ज़्यादातर दुश्मनों की दुश्मनी में तेज़ी और कड़ुवाहट की वजह
थी कि उनके अपने भाई, भतीजे, बेटे, बेटियाँ, बहनें और बहनोई इस्लाम
पैग़ाम के न सिर्फ़ पैरवी करनेवाले, बल्कि जान क़ुरबान करनेवाले हामी
मददगार हो गए थे। और उनके अपने दिल और जिगर के टुकड़े ही
कश-म-कश करने को तैयार थे। फिर मज़े की बात यह है कि जो लोग
जाहिलियत से टूट-टूटकर इस नई तहरीक की तरफ़ आ रहे थे, वे पहले
अपनी सोसाइटी के बेहतरीन लोग समझे जाते थे और इस तहरीक में श
होने के बाद वे इतने नेक, इतने सच्चे और अख़लाक़ के इतने पाकीज़ा इन्
बन जाते थे कि दुनिया उस पैग़ाम की बरतरी महसूस किए बग़ैर रह
सकती थी, जो ऐसे लोगों को अपनी तरफ़ खींच रही थी और उन्हें यह
बना रही थी।

इस लम्बी और सख़्त कश-म-कश के दौरान में अल्लाह मौक़े और ज़
के लिहाज़ से अपने नबी पर ऐसी जोशीली तक़रीरें उतारता रहा, जिनमें
जैसा बहाव, सैलाब की-सी ताक़त और तेज़ और धधकती आग जैसा
था। उन तक़रीरों में एक तरफ़ ईमानवालों को उनकी इब्तिदाई ज़िम्मेदा

ई गईं; उनके अन्दर इज्तिमाई और जमाअती शऊर पैदा किया गया; उन्हें वा (परहेज़गारी) और अख़लाक़ की अहमियत और बड़ाई और सीरत की ोज़गी की तालीम दी गई; उन्हें सच्चे दीन की तबलीग़ के तरीक़े बताए गए; याबी के वादों और जन्नत की ख़ुशख़बरियों से उनकी हिम्मत बँधाई गई; सब्र, जमाव व ठहराव और बुलन्द हौसले के साथ अल्लाह की राह में दोजुहद करने पर उभारा गया और जान पर खेल जाने का ऐसा ज़बरदस्त ा और हौसला उनमें पैदा किया गया कि वे हर मुसीबत झेल जाने और ालफ़त के बड़े से बड़े तूफ़ानों का मुक़ाबला करने के लिए तैयार हो गए। री तरफ़ मुख़ालिफ़ों और सच्चे रास्ते से मुँह मोड़नेवालों और ग़फ़लत की नींद ेवालों को उन क़ौमों के अंजाम से डराया गया, जिनका इतिहास वे ख़ुद ते थे; उन्हें तबाह की गई बस्तियों की निशानियों से इबरत दिलाई गई, के खंडहरों पर से रात-दिन अपने-अपने सफ़रों में उनका गुज़र होता था; ीद (एकेश्वरवाद) और आख़िरत (परलोक) की दलीलें उन खुली-खुली ानियों से दी गईं जो रात-दिन ज़मीन और आसमान में उनकी आँखों के मने मौजूद थीं और जिनको वे ख़ुद अपनी ज़िन्दगी में भी हर वक़्त देखते र महसूस करते थे। शिर्क (बहुदेववाद), ख़ुदमुख़्तारी के दावे, आख़िरत के कार और बाप-दादा की अंधी पैरवी की ग़लतियाँ ऐसी खुली दलीलों से ोह की गईं, जो दिल में बैठ जाने और दिमाग़ में उतर जानेवाली थीं। फिर के एक-एक शक और शुब्हे को दूर किया गया; एक-एक एतिराज़ का ासिब जवाब दिया गया; एक-एक उलझन जिसमें वे ख़ुद पड़े हुए थे या ारों को उलझाने की कोशिश करते थे, साफ़ की गई और हर तरफ़ से घेरकर हिलियत को इतनी सख़्ती से पकड़ा गया कि अक़्ल और समझ की दुनिया में के लिए ठहरने की कोई जगह बाक़ी न रही। इसके साथ फिर उनको ख़ुदा ग़ज़ब और क़ियामत की हौलनाकियों और जहन्नम के अज़ाब से डराया ा। उनके बुरे अख़लाक़ और ज़िन्दगी के ग़लत तरीक़े और जाहिलाना रस्मों ार हक़ से दुश्मनी और ईमानवालों को तकलीफ़ पहुँचाने पर उन्हें मलामत की ई और अख़लाक़ और तमद्दुन के बड़े-बड़े उसूल उनके सामने पेश किए गए नपर हमेशा से ख़ुदा की पसन्दीदा, साफ़-सुथरी और भली तहज़ीबों की तामीर ती चली आ रही है।

यह मरहला अपने आपमें मुख़्तलिफ़ मंज़िलों पर मुश्तमिल था, जिनमें से र मंज़िल में इस्लाम का पैग़ाम और ज़्यादा फैलता गया, जिद्दोजुहद के ाथ-साथ मुख़ालफ़त में भी तेज़ी आ गई, मुख़्तलिफ़ अक़ीदों और तरह-तरह के

रवैये अपनानेवाले गरोहों से वास्ता पड़ता गया और उसी के मुताबिक़ अल्ल
की तरफ़ से आनेवाले पैग़ामों में मज़मूनों की क़िस्में बढ़ती गईं—यह है क़ुरआ
मजीद की मक्की सूरतों का पसमंज़र।

मदीना में उतरनेवाली सूरतों का पसमंज़र

मक्का में इस तहरीक (आन्दोलन) को अपना काम करते हुए 13 स
गुज़र चुके कि एकायक मदीना में उसको एक ऐसा मर्कज़ मिल गया, ज
उसके लिए यह मुमकिन हो गया कि अरब के तमाम हिस्सों से अ
माननेवालों को समेटकर एक जगह अपनी ताक़त जुटा ले। चुनाँचे नबी (सल्ल
और इस्लाम के ज़्यादातर माननेवाले हिजरत करके मदीना पहुँच गए। इस त
यह पैग़ाम तीसरे मरहले में दाख़िल हो गया।

इस मरहले में हालात का नक़्शा बिलकुल बदल गया। मुस्लिम उम्मत क
बाक़ायदा हुकूमत की बुनियाद डालने में कामयाब हो गई। पुरानी जाहिलियत
अलमबरदारों से हथियारबन्द मुक़ाबला शुरू हुआ। पिछले नबियों की उम्म
(यहूदियों और ईसाइयों) से भी वास्ता पेश आया। ख़ुद मुस्लिम उम्मत
अन्दरूनी निज़ाम में तरह-तरह के मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) घुस आए और उन
भी निबटना पड़ा। और दस साल की सख़्त कश-म-कश से गुज़रकर आख़िरक
यह तहरीक कामयाबी के इस मंज़िल पर पहुँची कि पूरा अरब इसके तहत
गया और आलमगीर पैग़ाम और सुधार के दरवाज़े इसके सामने खुल गए। इ
मरहले की भी मुख़्तलिफ़ मंज़िलें थीं और हर मंज़िल में इस तहरीक की ख़
क़िस्म की ज़रूरतें थीं। इन ज़रूरतों के मुताबिक़ अल्लाह की तरफ़ से ऐ
तक़रीरें नबी (सल्ल॰) पर उतरती रहीं, जिनका अन्दाज़ कभी जोशीली तक़र्र
का, कभी शाहाना फ़रमानों और हुक्मों का, कभी तालीम देनेवालों की तरह द
और तालीम का और कभी सुधार करनेवालों की तरह समझाने-बुझाने का हो
था। उनमें बताया गया कि जमाअत और हुकूमत और अच्छे समाज की तार्म
किस तरह की जाए, ज़िन्दगी के मुख़्तलिफ़ शोबों को किन उसूलों और ज़ाब
पर क़ायम किया जाए, मुनाफ़िक़ों से क्या सुलूक हो, मुल्क के ग़ैर-मुस्लिमों
क्या बरताव हो, किताबवालों से ताल्लुक़ात की क्या शक्ल हो, लड़ रहे दुश्मन
और समझौता करनेवाली क़ौमों के साथ क्या रवैया इख़्तियार किया जाए औ
ईमानवालों का यह मुनज़्ज़म (सुसंगठित) गरोह दुनिया में ख़ुदा की नुमाइन्दग
की ज़िम्मेदारियाँ पूरी करने के लिए अपने आपको किस तरह तैयार करे। इ
तक़रीरों में एक तरफ़ मुसलमानों की तालीम और तरबियत की जाती थ
उनकी कमज़ोरियों पर उन्हें ख़बरदार किया जाता था, उनको ख़ुदा की राह
जान और माल से जिहाद करने पर उभारा जाता था, उनको हार और जीत

ोबत और आराम, बदहाली और ख़ुशहाली, अम्न और डर, मतलब यह कि हाल में उसके मुताबिक़ अख़लाक़ी बातों का दर्स दिया जाता था और उन्हें तरह तैयार किया जाता था कि वे नबी (सल्ल॰) के साथ आप (सल्ल॰) के नशीन बनकर दीन के इस पैग़ाम और सुधार के काम को अंज़ाम दे सकें। री तरफ़ उन लोगों को जो ईमानवाले नहीं थे, किताबवाले, मुनाफ़िक़, कुफ़्र र शिर्क करनेवाले सबको उनकी अलग-अलग हालतों के लिहाज़ से समझाने, मी से इस्लाम की ओर बुलाने, सख़्ती से मलामत और नसीहत करने, ख़ुदा अज़ाब से डराने और सबक़ आमोज़ वाक़िओं और हालात से सबक़ दिलाने कोशिश की जाती थी, ताकि हर पहलू से वाज़ेह होकर बात उनके सामने जाए।

यह है क़ुरआन मजीद की उन सूरतों का पसमंज़र, जो मदीना में उतरीं।

ुरआन का अपना ख़ास अन्दाज़ और उसकी ज़रूरत

ऊपर के बयान से यह बात वाज़ेह हो जाती है कि क़ुरआन मजीद एक ाम के साथ उतरना शुरू हुआ और वह पैग़ाम अपने आग़ाज़ से लेकर अपने म्मल होने तक 23 साल की मुद्दत में जिन-जिन मरहलों और जिन-जिन लों से गुज़रता रहा, उनकी मुख़्तलिफ़ ज़रूरतों के मुताबिक़ क़ुरआन के तलिफ़ हिस्से नाज़िल होते रहे। ज़ाहिर है कि ऐसी किताब में किताब की वह ीब नहीं हो सकती, जो डॉक्ट्रेट की डिग्री लेने के लिए किसी मक़ाले ोधपत्र) में अपनाई जाती है। फिर इस पैग़ाम के फैलने के साथ-साथ आन के जो छोटे और बड़े हिस्से उतरे, वे भी किताबचों की शक्ल में शाया किए जाते थे; बल्कि तक़रीरों की शक्ल में बयान किए जाते और उसी ल में फैलाए जाते थे, इसलिए उनका अन्दाज़ भी तहरीरी न था, बल्कि रीर का अन्दाज़ था। फिर यह तक़रीर भी एक प्रोफ़ेसर के लेक्चरों की-सी , बल्कि एक पैग़ाम देनेवाले और उस पैग़ाम की तरफ़ बुलानेवाले की रीरों की-सी थी जिसे दिल और दिमाग़, अक़्ल और जज़्बात हरेक से अपील ना होता है, जिसको हर तरह की ज़ेहनियतों से वास्ता पेश आता है, जिसे ने पैग़ाम और तबलीग़ और अमली तहरीक के सिलसिले में बेशुमार -तरह की हालतों में काम करना पड़ता है, हर मुमकिन पहलू से अपनी बात ों में बिठाना, ख़यालों की दुनिया बदलना, जज़्बात का सैलाब उठाना, ालिफ़ों का ज़ोर तोड़ना, साथियों का सुधार और तरबियत करना और उनमें ा और हौसला उभारना, दुश्मनों को दोस्त और इनकारियों को इक़रारी ना, मुख़ालिफ़ों की दलीलों को काटना, उनकी अख़लाक़ी ताक़त का ख़ात्मा ा, ग़रज़ उसे वह सब कुछ करना होता है जो एक पैग़ाम के अलमबरदार

और एक तहरीक के रहनुमा के लिए ज़रूरी है। इसलिए अल्लाह ने इस त
के सिलसिले में अपने पैग़म्बर पर जो तक़रीरें उतारीं, उनका तक़रीर का
वही था जो एक पैग़ाम और दावत के लिए मुनासिब होता है। उनमें कॉलेज
लेक्चरों का-सा अन्दाज़ तलाश करना सही नहीं है।

मज़मूनों को बार-बार बयान करने की ज़रूरत

यहीं से यह बात भी अच्छी तरह समझ में आ सकती है कि क़ुरआन
मज़मूनों को इतना ज़्यादा बार-बार बयान क्यों किया गया है। एक पैग़ाम
अमली तहरीक का फ़ितरी तक़ाज़ा यह है कि वह जिस वक़्त जिस मरहले
हो, उसमें वही बातें कही जाएँ जो उस मरहले से मेल खाती हों और जब
पैग़ाम और तहरीक एक मरहले में रहे, बाद के मरहलों की बात न छेड़ी ज
बल्कि उसी मरहले की बातों को दोहराया जाता रहे, चाहे इसमें कुछ महीने
या कई साल लग जाएँ। फिर अगर एक ही क़िस्म की बातों का दोहराना
ही जुम्ले और एक ही ढंग पर किया जाता रहे, तो कान उन्हें सुनते-सुनते
जाते हैं और जी ऊबने लगते हैं। इसलिए यह भी ज़रूरी है कि हर मरहले
जो बातें बार-बार कहनी हों उन्हें हर बार नए लफ़्ज़ों, नए अन्दाज़ और नए
से कहा जाए, ताकि निहायत अच्छे तरीक़े से वे दिलों में बैठ जाएँ और पै
और तहरीक की एक-एक मंज़िल अच्छी तरह पक्की और मज़बूत होती
जाए। इसके साथ यह भी ज़रूरी है कि पैग़ाम और तहरीक की बुनियाद
अक़ीदों और उसूलों पर हो, उन्हें पहले क़दम से आख़िरी मंज़िल तक वि
वक़्त और किसी हाल में नज़रों से ओझल न होने दिया जाए, बल्कि उ
दोहराना हर हाल में पैग़ाम के हर मरहले में होता रहे। यही वजह है
इस्लामी पैग़ाम के एक मरहले में क़ुरआन की जितनी सूरतें उतरी हैं उन सब
आम तौर पर एक ही तरह के मज़मून, लफ़्ज़ और बयान के अन्द
बदल-बदलकर आए हैं, मगर तौहीद, ख़ुदा की सिफ़ात, आख़िरत और उस
पूछगछ और इनाम और सज़ा, रिसालत, किताब पर ईमान, तक़वा और
अल्लाह पर भरोसा और इसी तरह के दूसरे बुनियादी मज़मून का दोहराया ज
पूरे क़ुरआन में नज़र आता है; क्योंकि इस तहरीक के किसी मरहले में भी उ
ग़फ़लत और लापरवाही सहन नहीं की जा सकती थी। ये बुनियादी तस
अगर ज़रा भी कमज़ोर हो जाते, तो इस्लाम की यह तहरीक अपनी सही रूह
साथ न चल सकती थी।

क़ुरआन की तरतीब उतरने की तरतीब के मुताबिक़ न होने का सबब

अगर ग़ौर किया जाए तो इसी बात से यह सवाल भी हल हो जाता है

बी (सल्ल॰) ने क़ुरआन को उसी तरतीब के साथ क्यों न मुरत्तब कर दिया, जैसके साथ वह उतरा था।

ऊपर आपको मालूम हो चुका है कि 23 साल तक क़ुरआन उस तरतीब से उतरता रहा, जिस तरतीब से पैग़ाम और तहरीक का आग़ाज़ और उसका फैलाव हुआ। अब यह ज़ाहिर है कि पैग़ाम पूरा हो जाने के बाद उन उतरे हुए हिस्सों के लिए वह तरतीब किसी तरह भी सही नहीं हो सकती थी, जो सिर्फ़ पैग़ाम को फैलाने ही के साथ मेल खाती थी। अब तो उनके लिए एक दूसरी ही तरतीब चाहिए थी, जो पैग़ाम के पूरा हो जाने के बाद इस सूरते-हाल के लिए ज़्यादा मुनासिब हो; क्योंकि शुरू में उन लोगों से बात की गई थी जो इस्लाम से बिलकुल ही नावाक़िफ़ थे। इसलिए उस वक़्त बिलकुल आग़ाज़ से तालीम और नसीहत शुरू की गई। मगर पैग़ाम और तहरीक के पूरा हो जाने के बाद उसके सबसे पहले मुख़ातब वे लोग हो गए जो उसपर ईमान लाकर एक उम्मत बन चुके थे और उस काम को जारी रखने के ज़िम्मेदार समझे गए थे, जिसे पैग़म्बर ने नज़रिए और अमल दोनों हैसियतों से मुकम्मल करके उनके हवाले किया था। अब लाज़िमी तौर पर पहली चीज़ यह हो गई कि पहले ये लोग ख़ुद अपनी ज़िम्मेदारियों से, ज़िन्दगी के अपने क़ानूनों से और उन बिगाड़ों से जो पिछले पैग़म्बरों के माननेवालों में पैदा होते रहे हैं, अच्छी तरह वाक़िफ़ हो जाएँ। फिर इस्लाम से नावाक़िफ़ दुनिया के सामने ख़ुदा की हिदायत पेश करने के लिए आगे बढ़ें।

इसके अलावा क़ुरआन मजीद जिस तरह की किताब है उसे अगर आदमी अच्छी तरह समझ ले, तो उसपर ख़ुद ही यह हक़ीक़त खुल जाएगी कि एक-एक तरह के मज़मूनों को एक-एक जगह जमा करना इस किताब के मिज़ाज ही से मेल नहीं खाता। इसके मिज़ाज का तो तक़ाज़ा यही है कि उसके पढ़नेवाले के सामने पैग़ाम और तहरीक के मदीनावाले मरहले की बातें मक्कावाले मरहले की तालीम के बीच और मक्कावाले मरहले की बातें मदीना दौरवाली तक़रीरों के बीच और शुरुआती बातें आख़िर की नसीहतों के बीच में और आख़िरी दौर की हिदायतें शुरुआती दौर की तालीम के पहलू में बार-बार आती चली जाएँ, ताकि इस्लाम की पूरी शक्ल और उसका जामेअ (व्यापक) नक़्शा उसकी निगाह में रहे। और किसी वक़्त भी वह एकरुख़ा न होने पाए।

फिर अगर क़ुरआन को उसके उतरने की तरतीब पर मुरत्तब किया भी जाता, तो वह तरतीब बाद के लोगों के लिए सिर्फ़ उसी सूरत में बामानी हो सकती थी, जबकि क़ुरआन के साथ उसके उतरने का पूरा इतिहास और उसके एक-एक हिस्से के साथ उसके उतरने की क़ैफ़ियत और वजह लिखकर लगा दी जाती और वह लाज़िमी तौर पर क़ुरआन के साथ उसका एक हिस्सा बनकर

रहती। यह बात उस मक़सद के ख़िलाफ़ थी, जिसके लिए अल्लाह ने अप
कलाम का यह मजमूआ मुरत्तब और महफ़ूज़ कराया था। वहाँ तो यही चीं
सामने थी कि अल्लाह का .ख़ालिस कलाम किसी दूसरे कलाम की मिलावट
उसको शामिल किए बिना अपनी मुख़्तसर सूरत में मुरत्तब हो जिसे बच
जवान, बूढ़े, औरत, मर्द, शहरी, देहाती, आम लोग, आलिम सभी पढ़ें।
ज़माने में और हर जगह, हर हालत में पढ़ें और हर अक़्ल और सूझ-बूझ
दरजे का इनसान कम से कम यह बात ज़रूर जान ले कि उसका मालिक उस
क्या चाहता है और क्या नहीं चाहता। ज़ाहिर है कि यह मक़सद .ख़त्म हो जात
अगर .ख़ुदा के कलाम के इस मजमूए के साथ एक लम्बा-चौड़ा इतिहास
लगा हुआ होता और उसका पढ़ना भी ज़रूरी कर दिया जाता।

हक़ीक़त यह है कि क़ुरआन की मौजूदा तरतीब पर जो लोग एतिरा
करते हैं, वे लोग इस किताब के मक़सद और मंशा से न सिर्फ़ नावाक़िफ़
बल्कि कुछ इस ग़लतफ़हमी में भी पड़े हुए मालूम होते हैं कि यह किताब सि
इतिहास, फ़लसफ़े और सामाजिक विज्ञान को जाननेवालों के लिए ही उतरी है

☆☆☆

क़ुरआन की तरतीब के सिलसिले में यह बात भी पढ़नेवालों को मालूम
जानी चाहिए कि यह तरतीब बाद के लोगों की बनाई हुई नहीं है, बल्कि .ख़
अल्लाह की हिदायत के तहत नबी (सल्ल॰) ही ने क़ुरआन को इस तरह मुरत्त
किया था। क़ायदा यह था कि जब कोई सूरा उतरती तो नबी (सल्ल॰) उ
वक़्त अपने कातिबों (लिखनेवालों) में से किसी को बुलाकर और उसव
ठीक-ठीक लिखवा देने के बाद हिदायत कर देते कि यह सूरा फ़ुलाँ सूरा के ब
और फ़ुलाँ सूरा के पहले रखी जाए। इसी तरह अगर क़ुरआन का कोई ऐ
हिस्सा उतरता जिसे मुस्तक़िल सूरा बनाना सामने न होता, तो नबी (सल्ल
हिदायत कर देते थे कि उसे फ़ुलाँ सूरा में फ़ुलाँ जगह पर लिख दिया जाए
फिर उसी तरतीब से नबी (सल्ल॰) .ख़ुद भी नमाज़ में और दूसरे मौक़ों प
क़ुरआन मजीद की तिलावत करते थे और उसी तरतीब के मुताबिक़ न
(सल्ल॰) के साथी भी उसको याद करते थे। इसलिए यह एक साबितशु
तारीख़ी हक़ीक़त है कि क़ुरआन मजीद का उतरना जिस दिन मुकम्मल हुआ
उसी दिन उसकी तरतीब भी मुकम्मल हो गई। जो इसे उतार रहा था, हक़ीक़
में वही इसे मुरत्तब भी कर रहा था। जिसपर वह उतारा गया, उसी के हाथ
उसे मुरत्तब भी करा दिया गया। किसी दूसरे की मजाल न थी कि इस
दख़लअन्दाज़ी करता।

;रआन की हिफ़ाज़त

चूँकि नमाज़ शुरू ही से मुसलमानों पर फ़र्ज़ थी।[1] और क़ुरआन के पढ़ने ो नमाज़ का एक ज़रूरी हिस्सा क़रार दिया गया था। इसलिए क़ुरआन के तरने के साथ ही मुसलमानों में क़ुरआन हिफ़्ज़ (कंठस्थ) करने का सिलसिला ल पड़ा और जैसे-जैसे क़ुरआन उतरता गया, मुसलमान उसको याद भी करते ले गए। इसी तरह क़ुरआन की हिफ़ाज़त का दारोमदार सिर्फ़ खजूर के उन तों और हड्डी और झिल्ली के उन टुकड़ों पर ही न था, जिनपर नबी (सल्ल॰) पने कातिबों से उसे लिखवाया करते थे; बल्कि वह उतरते ही बीसियों, फिर कड़ों, फिर हज़ारों, फिर लाखों दिलों पर नक़्श (अंकित) हो जाता था और सी शैतान के लिए इसका इमकान ही न था कि उसमें एक लफ़्ज़ का भी ेर-फेर कर सके।

नबी (सल्ल॰) के इन्तिक़ाल के बाद जब अरब में इस्लाम से फिरने का फ़ान उठा और उसका मुक़ाबला करने के लिए सहाबियों (नबी के साथियों) ो बड़ी घमासान की लड़ाई लड़नी पड़ी। ख़ुद इन लड़ाइयों में ऐसे सहाबियों की क बड़ी तादाद शहीद हो गई, जिन्हें पूरा क़ुरआन हिफ़्ज़ था। इससे नबी ल्ल॰) के साथी हज़रत उमर (रज़ि॰) के मन में ख़याल आया कि क़ुरआन की फ़ाज़त के मामले में सिर्फ़ एक ही ज़रीए पर भरोसा कर लेना मुनासिब नहीं बल्कि दिल में महफ़ूज़ होने के साथ-साथ काग़ज़ के पन्नों पर भी उसे फ़ूज़ कर लेने का इन्तिज़ाम कर लेना चाहिए। चुनाँचे इस काम की ज़रूरत न्होंने नबी (सल्ल॰) के एक दूसरे साथी हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) से बयान की ोर उन्होंने सोच-विचार के बाद हज़रत ज़ैद-बिन-साबित अनसारी (रज़ि॰) को, ो नबी (सल्ल॰) के कातिब रह चुके थे, इस ख़िदमत पर लगाया। क़ायदा यह नाया गया कि एक तरफ़ तो लिखे हुए वे तमाम हिस्से जुटाए जाएँ जो नबी ल्ल॰) ने छोड़े हैं, दूसरी तरफ़ सहाबियों में से भी जिस-जिस के पास क़ुरआन ा उसका कोई हिस्सा लिखा हुआ मिले, वह उनसे ले लिया जाए[2] और फिर रआन के हाफ़िज़ों से भी मदद ली जाए और इन तीनों ज़रीओं की मुत्तफ़क़ा

वाज़ेह रहे कि पाँच वक़्त की नमाज़ तो हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के नबी होने के कई साल बाद फ़र्ज़ हुई थी, लेकिन नमाज़ अपने आप में पहले दिन से फ़र्ज़ थी। इस्लाम की कोई ऐसी घड़ी कभी नहीं गुज़री है जिसमे नमाज़ फ़र्ज़ न रही हो।

भरोसेमन्द रिवायतों से मालूम होता है कि नबी (सल्ल०) की ज़िन्दगी में बहुत-से सहाबा ने क़ुरआन को या उसके मुख़्तलिफ़ हिस्सों को अपने पास लिख छोड़ा था। चुनाँचे इस सिलसिले में हज़रत उस्मान, अली, अब्दुल्लाह-बिन-मसऊद, अब्दुल्लाह-बिन-अम्र-बिन-आस, सालिम मौला हुज़ैफ़ा, ज़ैद-बिन-साबित, मुआज़-बिन-जबल, उबई-बिन-कअब और अबू-ज़ैद क़ैस-बिन-सकन (रज़ि०) के नाम मिलते हैं।

(सर्वसम्मत) गवाही पर, बिलकुल सही होने का इत्मीनान करने के बाद क़ुरआ
का एक-एक लफ़्ज़ किताब में दर्ज कर दिया जाए। इस क़ायदे के मुताबि
क़ुरआन मजीद का एक मुस्तनद नुस्ख़ा तैयार करके उम्मुल-मोमिनीन हज़र
हफ़्सा (रज़ि॰), नबी (सल्ल॰) की बीवी, के यहाँ रखवा दिया गया और लोगों व
आम इजाज़त दे दी गई कि जो चाहे उसकी नक़ल करे और जो चाहे इस
मिलाकर अपने नुस्ख़े को ठीक कर ले।

क़ुरआन पढ़ने में यकसानियत

अरब में मुख़्तलिफ़ इलाक़ों और क़बीलों की बोलियों में वैसे ही फ़र्क़ पा
जाते थे, जैसे हमारे देश में शहर-शहर की बोली और ज़िले-ज़िले की बोली
फ़र्क़ है। हालाँकि ज़बान सबकी वही एक हिन्दी या उर्दू या पंजाबी या बंगाल
वग़ैरह है। क़ुरआन मजीद हालाँकि उतरा उस ज़बान में था जो मक्का में क़ुरै
के लोग बोलते थे, लेकिन शुरू में इस बात की इजाज़त दे दी गई थी कि दूस
इलाक़ों और क़बीलों के लोग अपने-अपने लहजे, अन्दाज़ और मुहावरे
मुताबिक़ इसे पढ़ लिया करें; क्योंकि इस तरह मानी में कोई फ़र्क़ नहीं पड़त
था, सिर्फ़ इबारत उनके लिए नर्म हो जाती थी, लेकिन धीरे-धीरे जब इस्ला
फैला और अरब के लोगों ने दुनिया के एक बड़े हिस्से को फ़तूह कर लिया औ
दूसरी क़ौमों के लोग भी इस्लाम में दाख़िल होने लगे और बड़े पैमाने पर अर
और ग़ैर-अरब के मेल-जोल से अरबी ज़बान पर भी असर पड़ने लगा, तो य
अन्देशा पैदा हुआ कि अगर अब भी दूसरे लहजों, अन्दाज़ों और मुहावरों
मुताबिक़ क़ुरआन पढ़ने की इजाज़त बाक़ी रही तो इससे तरह-तरह के फ़ित
खड़े हो जाएँगे। मिसाल के तौर पर यह कि एक आदमी किसी दूसरे आदमी क
ग़ैर वाक़िफ़ तरीक़े पर अल्लाह के कलाम को पढ़ते हुए सुनेगा और य
समझकर उससे लड़ पड़ेगा कि वह जान-बूझकर अल्लाह के कलाम
रद्दो-बदल कर रहा है या यह कि अलफ़ाज़ के ये इख़्तिलाफ़ धीरे-धीरे हक़ीक़
में क़ुरआन में रद्दो-बदल का रास्ता खोल देंगे या यह कि अरब और ग़ैर-अर
के मेल-जोल से जिन लोगों की ज़बान बिगड़ेगी, वे अपनी बिगड़ी हुई ज़बान
मुताबिक़ क़ुरआन में हेर-फेर करके उसके कलाम के हुस्न और ख़ूबसूरती क
बिगाड़ देंगे। इन वजहों से हज़रत उस्मान (रज़ि॰) ने सहाबा के मशवरे से य
तय किया कि तमाम इस्लामी मुल्कों में सिर्फ़ क़ुरआन के उस मेयारी औ
भरोसेमन्द नुस्ख़े को छापा जाए, जो हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) के हुक्म से लिख
गया था और बाक़ी तमाम दूसरे लहजों, अन्दाज़ों और मुहावरों पर लिखे हु
नुस्ख़ों या हिस्सों को फैलाने पर पाबन्दी लगा दी जाए।

आज जो क़ुरआन हमारे हाथों में है, यह ठीक-ठीक उसी नुस्ख़े वे

ाबिक़ है जो हज़रत अबू-बक्र सिद्दीक़ (रज़ि॰) ने तैयार करवाया और
ाकी नक़लें हज़रत उस्मान (रज़ि॰) ने सरकारी इन्तिज़ाम में तमाम इलाक़ों में
वाई थीं। इस वक़्त भी दुनिया में बहुत-सी जगहों पर क़ुरआन के वे
ानद नुस्ख़े मौजूद हैं। किसी को अगर क़ुरआन के महफ़ूज़ होने में ज़र्रा
बर भी शक हो तो वह अपना इत्मीनान इस तरह कर सकता है कि पश्चिमी
ोक़ा में किसी किताब की दुकान से क़ुरआन का एक नुस्ख़ा ख़रीदे और
ा में किसी हाफ़िज़ से ज़बानी क़ुरआन सुनकर उसको मिलाए और फिर
या की बड़ी-बड़ी लाइब्रेरियों में हज़रत उस्मान (रज़ि॰) के वक़्त से लेकर
त तक मुख़्तलिफ़ सदियों के लिखे हुए जो नुस्ख़े रखे हुए हैं उनसे इसको
ाकर देख लें। अगर किसी हर्फ़ या किसी शोशे का फ़र्क़ वह पाए तो उसकी
ेदारी है कि दुनिया को इस सबसे बड़ी तारीख़ी खोज से ज़रूर बाख़बर
। कोई शक और शुब्हे की आदत रखनेवाला इनसान क़ुरआन को अल्लाह
तरफ़ से आई हुई किताब होने पर शक करना चाहे, तो कर सकता है;
न यह बात कि जो क़ुरआन हमारे हाथ में है वह बिना किसी कमी-बेशी के
वही क़ुरआन है, जो अल्लाह के रसूल मुहम्मद (सल्ल॰) ने दुनिया के
ने पेश किया था; यह तो ऐसी तारीख़ी हक़ीक़त है जिसमें किसी शक और
की गुंजाइश ही नहीं है। इनसानी तारीख़ में कोई दूसरी किताब ऐसी नहीं
जाती जो इतनी मुस्तनद (प्रामाणिक) हो। अगर कोई आदमी इसके सही
में शक करता है, तो वह फिर इसमें भी शक कर सकता है कि रोमन
ायर नाम की कोई सल्तनत दुनिया में रह चुकी है, और कभी मुग़ल भी
ुस्तान पर हुकूमत कर चुके हैं और नेपोलियन नाम का कोई आदमी भी
या में पाया गया है। ऐसी-ऐसी तारीख़ी हक़ीक़तों पर शक ज़ाहिर करना
का नहीं, जिहालत का सुबूत है।

आन से फ़ायदा उठाने के लिए कुछ ज़रूरी सुझाव

क़ुरआन एक ऐसी किताब है जिसकी तरफ़ दुनिया में बेशुमार इनसान
ार मक़सद लेकर रुजूअ करते हैं। इन सबकी ज़रूरतों और मक़सदों को
ने रखकर कोई मशवरा देना इनसान के लिए मुमकिन नहीं है। ऐसे लोगों
भीड़ में मुझे सिर्फ़ उन लोगों से दिलचस्पी है, जो इसको समझना चाहते हैं
यह मालूम करना चाहते हैं कि यह किताब इनसान की ज़िन्दगी के मामलों
इसकी क्या रहनुमाई करती है। ऐसे लोगों को मैं यहाँ क़ुरआन पढ़ने के
ढ के बारे में कुछ मशवरे दूँगा और कुछ उन मुश्किलों को दूर करने की
ाश करूँगा, जो आम तौर से इनसान के सामने इस मामले में पेश आती

तास्सुब से पाक होकर क़ुरआन को पढ़ें

कोई आदमी चाहे क़ुरआन पर ईमान रखता हो या न रखता हो, बहरह अगर वह इस किताब को हक़ीक़त में समझना चाहता है तो सबसे पहला व उसे यह करना चाहिए कि अपने दिलो-दिमाग़ को पहले से क़ायम किए तसव्वुर और नज़रियों से और इसके हक़ में या इसके ख़िलाफ़ मक़सदों से कि हद तक मुमकिन हो ख़ाली कर ले और समझने का ख़ालिस मक़सद लेकर र दिल से इसको पढ़ना शुरू करे। जो लोग कुछ ख़ास क़िस्म के ख़याल दिमाग़ लेकर इस किताब को पढ़ते हैं, वे इसकी लाइनों में अपने ही ख़यालों को प चले जाते हैं, क़ुरआन की उनको हवा भी नहीं लगने पाती। पढ़ने और मुत करने का यह तरीक़ा किसी भी किताब के पढ़ने के लिए सही नहीं है। म ख़ुसूसियत के साथ क़ुरआन तो इस तरीक़े से पढ़नेवालों के लिए अपनी म के दरवाज़े खोलता ही नहीं।

क़ुरआन को बार-बार पढ़ें

फिर जो आदमी सिर्फ़ थोड़ी-सी सुध-बुध हासिल करना चाहता हो उस लिए तो शायद एक बार का पढ़ लेना काफ़ी हो जाए, मगर जो उस गहराइयों में उतरना चाहे उसके लिए दो-चार बार का पढ़ना भी काफ़ी नहीं सकता। उसको बार-बार पढ़ना चाहिए, हर बार एक ख़ास ढंग से पढ़ना चाहि और एक तालिबे-इल्म (विद्यार्थी) की तरह पेन और कॉपी साथ लेकर बैठ चाहिए, ताकि ज़रूरी बातें नोट करता जाए। इस तरह जो लोग पढ़ने को तै हों, उनको कम से कम दो बार पूरे क़ुरआन को सिर्फ़ इस मक़सद से पढ़ चाहिए कि उनके सामने कुल मिलाकर काम और सोच का वह पूरा निज़ाम जाए, जिसे यह किताब सामने लाना चाहती है। इस शुरुआती मुताले के दौर में वे क़ुरआन के पूरे मंज़र पर एक जामेअ (व्यापक) नज़र डालने की कोशि करें और यह देखते जाएँ कि यह किताब कौन-से बुनियादी तसव्वुर पेश कर है। और फिर इन तसव्वुरों पर ज़िन्दगी का किस तरह का निज़ाम तामीर कर है। इस बीच अगर किसी जगह पर कोई सवाल मन में खटके तो उसपर व उसी वक़्त कोई फ़ैसला न कर बैठें, बल्कि उसे नोट कर लें और सब्र के स आगे मुताला जारी रखें। ज़्यादा उम्मीद इसी की है कि आगे कहीं न कहीं उ इसका जवाब मिल जाएगा। अगर जवाब मिल जाए तो अपने सवाल के स उसे नोट कर लें, लेकिन अगर पहले मुताले के दौरान में उन्हें अपने कि सवाल का जवाब न मिले, तो सब्र के साथ वे दूसरी बार पढ़ें। मैं अपने तज की बुनियाद पर यह कहता हूँ कि दूसरी बार के गहरे मुताले के नतीजे

ाद ही कोई सवाल बाक़ी रहता है, जिसका जवाब मिलना बाक़ी रह जाता

़आन से मुकम्मल हिदायत के लिए ऐसा भी करें

इस तरह क़ुरआन पर एक जामेआ (व्यापक) नज़र डाल लेने के बाद सील से पढ़ना शुरू करना चाहिए। इस सिलसिले में पढ़नेवाले को चाहिए वह क़ुरआन की तालीम का एक-एक पहलू मन में बिठाकर नोट करता ए। मिसाल के तौर पर वह इस बात को समझने की कोशिश करे कि ानियत का कौन-सा नमूना है, जिसे क़ुरआन पसन्दीदा ठहराता है और किस ने के इनसान उसके नज़दीक नापसन्दीदा और धुत्कारे हुए हैं। इस बात को छी तरह समझने के लिए आदमी को चाहिए कि अपनी कॉपी पर एक तरफ़ ान्दीदा इनसान' और दूसरी तरफ़ 'नापसन्दीदा इनसान' की ख़ुसूसियतें ाने-सामने नोट करता चला जाए या मिसाल के तौर पर वह यह मालूम ने की कोशिश करे कि क़ुरआन के नज़दीक इनसान की कामयाबी और ात का दारोमदार किन बातों पर है और क्या चीज़ें हैं, जिनको वह इनसान लिए नुक़सान और हलाकत और बरबादी का सबब समझता है। इस बात भी अच्छी तरह और तफ़सील से जानने का सही तरीक़ा यह है कि आदमी नी कॉपी पर 'फ़ायदे और कामयाबी के सबब' और 'घाटे के सबब' जैसे दो ग़ान एक-दूसरे के मुक़ाबले में लिख ले और क़ुरआन पढ़ने के वक़्त हर दिन ों क़िस्म की चीज़ों को नोट करता चला जाए। इसी तरह अक़ीदे, अख़लाक़, और अधिकार, ज़िम्मेदारियाँ, सामाजिकता, तमद्दुन (संस्कृति), मईशत र्थ), सियासत, क़ानून, डिसिप्लीन (अनुशासन) सुलह, जंग और ज़िन्दगी के ए मामलों में से एक-एक के बारे में क़ुरआन की हिदायतों को आदमी नोट ता चला जाए और यह समझने की कोशिश करे कि उनमें से हर-हर शोबे भाग) की मजमूई शक्ल क्या बनती है और फिर इन सबको मिलाकर जोड़ से ज़िन्दगी का पूरा नक़्शा किस तरह का बनता है।

फिर जब आदमी ज़िन्दगी के किसी ख़ास मामले के बारे में तहक़ीक़ ना चाहे कि क़ुरआन इसके बारे में क्या कहता है, तो इसके लिए सबसे छा तरीक़ा यह है कि पहले वह इस मामले के बारे में पुराने और नए ्चर को अच्छी तरह पढ़कर वाज़ेह तौर पर यह मालूम कर ले कि इस मामले बुनियादी बातें क्या हैं। इनसान ने अब तक इस पर क्या सोचा और समझा क्या मामले इसमें हल करने के हैं और कहाँ जाकर इनसानी सोच और क की गाड़ी अटक जाती है। इसके बाद इन्हीं हल करने लायक़ बातों को ाह में रखकर आदमी को क़ुरआन का मुताला करना चाहिए। मेरा तजुर्बा है इस तरह जब आदमी किसी मामले की छान-बीन के लिए क़ुरआन पढ़ने

बैठता है, तो उसे ऐसी-ऐसी आयतों में अपने सवालों का जवाब मिलता है कि वह इससे पहले बीसियों बार पढ़ चुका होता है और कभी उसके मन में भी बात नहीं आती कि यहाँ यह मज़मून भी छिपा हुआ है।

क़ुरआन की रूह से वाक़िफ़ होने का तरीक़ा

लेकिन क़ुरआन समझने की इन सारी तदबीरों के बावजूद आदमी क़ुरआ की रूह से पूरी तरह वाक़िफ़ नहीं होने पाता, जब तक कि अमली तौर पर काम न करे, जिसके लिए क़ुरआन आया है। यह सिर्फ़ नज़रियों और ख़य की किताब नहीं है कि आप आराम कुर्सी पर बैठकर इसे पढ़ें और इसकी स बातें समझ जाएँ। यह दुनिया के आम मज़हबी तसव्वुर के मुताबिक़ एक मज़हबी किताब भी नहीं है कि मदरसे और ख़ानक़ाह में सारे राज़ (रहस्य) उ लिए जाएँ। जैसा कि शुरू में बताया जा चुका है कि यह एक पैग़ाम तहरीक (आन्दोलन) की किताब है। इसने आते ही एक ख़ामोश तबीअत निहायत नेक इनसान को तनहाई से निकालकर ख़ुदा से फिरी हुई दुनिया मुक़ाबले में ला खड़ा किया। बातिल (असत्य) के ख़िलाफ़ उससे आवाज़ उठ और वक़्त के नाफ़रमानों, गुमराहों और बेदीनों से उसे लड़ा दिया। घर-घर एक-एक पाक रूह और पाकीज़ा नफ़्स को खींच-खींचकर लाई और हक़ तरफ़ बुलानेवाले के झण्डे तले उन सबको इकट्ठा किया। कोने-कोने एक-एक फ़ितना पैदा करनेवाले और फ़साद फैलानेवाले को चेलैंज देकर उठ और हक़ के माननेवालों से उनकी जंग कराई। एक अकेले आदमी की पुकार अपना काम शुरू करके अल्लाह की हुकूमत क़ायम करने तक पूरे 23 साल र किताब उस अज़ीमुश्शान तहरीक की रहनुमाई करती रही और हक़ व ना की इस लम्बी और जानलेवा कश-म-कश के दौरान में एक-एक मंज़िल एक-एक मरहले पर इसी ने ख़राबी की वजहें और तामीर के तरीक़े बता अब भला यह कैसे मुमकिन है कि आप सिरे से कुफ़्र और दीन के झगड़े इस्लाम और जाहिलियत की कश-म-कश के मैदान में क़दम ही न रखें। इस कश-म-कश की किसी मंज़िल से गुज़रने का आपको मौक़ा ही न मिला और फिर सिर्फ़ क़ुरआन के लफ़्ज़ पढ़-पढ़कर उसकी सारी हक़ीक़तें सामने जाएँ। इसे तो पूरी तरह आप उसी वक़्त समझ सकते हैं, जब आप इसे ले उठें और लोगों को अल्लाह की तरफ़ बुलाने का काम शुरू करें। और जि जिस तरह यह किताब रहनुमाई करती जाए, उस-उस तरह क़दम उठाते जाएँ; तब वे सारे तजुर्बे आपको पेश आएँगे जो क़ुरआन उतरने के वक़्त आए थे। मक्का, हबश और ताइफ़ की मंज़िलें भी आप देखेंगे और बद्र उहुद से लेकर हुनैन और तबूक तक के मरहले भी आपके सामने आएँ अबू-जहल और अबू-लहब जैसे इस्लाम-दुश्मनों से भी आपको वास्ता पड़े

ाफ़िक़ और यहूदी भी आपको मिलेंगे। और सबसे पहले ईमान लानेवालों से
र ऐसे लोग जो अभी इस्लाम में नहीं आए हैं, सभी तरह के इनसानी नमूने
प देख भी लेंगे और बरत भी लेंगे। यह एक और ही तरह का 'सुलूक' है,
से मैं 'सुलूके-क़ुरआनी' कहता हूँ। इस सुलूक की शान यह है कि इसकी
स-जिस मंज़िल से आप गुज़रते जाएँगे क़ुरआन की कुछ सूरतें और आयतें
द सामने आकर आपको बताती चली जाएँगी कि वे इसी मंज़िल पर उतरी थीं
र यह हिदायत लेकर आई थीं। उस वक़्त यह तो मुमकिन है कि लफ़्ज़,
व (व्याकरण) और मानी और बयान की कुछ बारीकियाँ सालिक की निगाह
छिपी रह जाएँ, लेकिन यह मुमकिन नहीं है कि क़ुरआन अपनी रूह को
के सामने खोलकर लाने में कंजूसी कर जाए।

फिर इसी बुनियादी उसूल के मुताबिक़ क़ुरआन के अहकाम, इसकी
ख़लाक़ी तालीम, इसकी मआशी और तमद्दुनी हिदायतें और ज़िन्दगी के
त्तलिफ़ पहलुओं के बारे में इसके बताए हुए उसूल और क़ानून आदमी की
झ में उस वक़्त तक आ ही नहीं सकते, जब तक कि वह अमली तौर पर
को बरत कर न देखे। न वह आदमी इस किताब को समझ सकता है,
सने अपनी इनफ़िरादी (व्यक्तिगत) ज़िन्दगी को इसकी पैरवी से आज़ाद कर
ा हो और न वह क़ौम इससे पूरे तौर पर वाक़िफ़ हो सकती है जिसके सारे
इज्तिमाई और समाजी इदारे इसके बताए हुए रवैये के ख़िलाफ़ चल रहे हों।

रआन की तालीम हमेशा के लिए है

क़ुरआन के इस दावे को हर आदमी जानता है कि वह सारे ही इनसानों
रहनुमाई के लिए आया है, मगर जब कोई आदमी उसको पढ़ने बैठता है तो
ब्रता है कि उसकी बात का रुख़ ज़्यादातर अपने उतरने के वक़्त के
बवालों की तरफ़ है। हालाँकि कभी-कभी वह सारे इनसानों और आम लोगों
भी पुकारता है, लेकिन ज़्यादातर बातें वह ऐसी कहता है जो अरब के लोगों
मिज़ाज, अरब ही के माहौल, अरब ही के इतिहास और अरब ही के रस्म-
ाज से ताल्लुक़ रखती हैं। इन चीज़ों को देखकर आदमी सोचने लगता है कि
चीज़ आम इनसानों की रहनुमाई के लिए उतारी गई थी उसमें वक़्ती,
ामी और क़ौमी असर इतना ज़्यादा क्यों है। इस मामले की हक़ीक़त को न
झने की वजह से कुछ लोग इस शक में पड़ जाते हैं कि शायद यह चीज़
ुल में तो अपने उतरने के वक़्त के अरबों ही के सुधार के लिए थी, लेकिन
द में ज़बरदस्ती खींच-तानकर उसे तमाम इनसानों के लिए और हमेशा के
ए रहनुमाई की किताब क़रार दे दिया गया।

जो आदमी यह सवाल सिर्फ़ सवाल के लिए नहीं करता, बल्कि हक़ीक़त
उसे समझना चाहता है उसे मैं मशवरा दूँगा कि वह पहले ख़ुद क़ुरआन की

तालीम को, जो हमेशा के लिए है, पढ़कर ज़रा उन जगहों पर निशान लग
जहाँ उसने कोई ऐसा अक़ीदा, या ख़याल या तसव्वुर पेश किया हो या क
ऐसा अख़लाक़ी उसूल या अमली क़ायदा और ज़ाब्ता बयान किया हो जो सि
अरब ही के लिए ख़ास हो और जिसको वक़्त, ज़माने और मक़ाम ने हक़ीक़
में महदूद कर रखा हो। सिर्फ़ यह बात कि वह एक ख़ास जगह या ज़माने
लोगों को ख़िताब करके उनके मुशरिकाना अक़ीदों और रस्म-रिवाजों का र
करता है। उन्हीं के आसपास की चीज़ों को दलील के तौर पर लेकर तौह
(एकेश्वरवाद) की दलीलें ले आता है, यह फ़ैसला कर देने के लिए काफ़ी न
है कि उसकी दावत और उसकी अपील भी वक़्ती और मक़ामी है। देखना
चाहिए कि शिर्क के रद्द में जो कुछ वह कहता है, क्या वह दुनिया के
शिर्क पर उसी तरह सही नहीं उतरता जिस तरह अरब के मुशरिकों के शिर्क
सही उतरता है? क्या इन्हीं दलीलों को हम हर ज़माने और हर मुल्क
मुशरिकों के ख़याल की इस्लाह के लिए इस्तेमाल नहीं कर सकते? और व
तौहीद साबित करने के लिए क़ुरआन के दलील देने के तरीक़े को थोड़े
रद्दो-बदल के साथ हर वक़्त, हर जगह काम में लाया नहीं जा सकता? अ
जवाब हाँ में है, तो फिर कोई वजह नहीं कि एक आलमगीर तालीम को सि
इस वजह से वक़्ती और मक़ामी समझ लिया जाए कि एक ख़ास वक़्त में ए
ख़ास क़ौम को ख़िताब करके वह पेश की गई थी। दुनिया का कोई फ़लस
और ज़िन्दगी का कोई निज़ाम और कोई मज़हबे-फ़िक्र (विचारधारा) ऐसा नहीं
जिसकी सारी बातें शुरू से आख़िर तक तजरीदी (Abstract) अन्दाज़ में पेश
गई हों और किसी तयशुदा हालत या सूरत पर उसको फिट करके उनको वाज़
न किया गया हो। ऐसा मुकम्मल अन्दाज़ एक तो मुमकिन नहीं है और मुमकि
हो भी तो जो चीज़ इस तरीक़े पर पेश की जाएगी वह सिर्फ़ काग़ज़ के पन्
ही पर रह जाएगी, इनसानों की ज़िन्दगी में उसका दाख़िल होकर एक अम
निज़ाम में तबदील होना मुश्किल है।

फिर किसी फ़िक्री, अख़लाक़ी और तमद्दुनी तहरीक को अगर आल
पैमाने पर फैलाना मक़सद हो तो इसके लिए भी यह हरगिज़ ज़रूरी नहीं
बल्कि सच यह है कि मुफ़ीद भी नहीं है कि शुरू से उसको बिलकुल ही आल
बनाने की कोशिश की जाए। हक़ीक़त में इसका सही अमली तरीक़ा सिर्फ़ ए
ही है और वह यह है कि जिन विचारों, उसूलों और नज़रियों पर वह तहर
इनसानी ज़िन्दगी के निज़ाम को क़ायम करना चाहती है, उन्हें पूरी क़ुव्वत
साथ ख़ुद उस मुल्क में पेश किया जाए जहाँ से उसकी दावत उठी हो;
लोगों के दिल व दिमाग़ में बिठाया जाए जिनकी ज़बान, मिज़ाज, आदत उ
रुझानों से उस तहरीक के चलानेवाले अच्छी तरह वाक़िफ़ हों और फिर अ

मुल्क में उन उसूलों को अमली तौर पर बरत कर और उनपर ज़िन्दगी का
क कामयाब निज़ाम चलाकर दुनिया के सामने नमूना पेश किया जाए। तभी
री क़ौमें उसकी तरफ़ ध्यान देंगी और उनके समझदार लोग खुद आगे बढ़कर
े समझने और अपने मुल्क में रिवाज देने की कोशिश करेंगे। इसलिए सिर्फ़
ह बात कि किसी फ़िक्र और अमल के निज़ाम को शुरू में एक ही क़ौम के
मने पेश किया गया था और दलीलों का सारा ज़ोर उसी को समझाने और
ीनान दिलाने पर लगा दिया गया था, इस बात की दलील नहीं है कि वह
क्र और अमल का निज़ाम सिर्फ़ क़ौमी (राष्ट्रीय) है। हक़ीक़त में जो
सूसियतें एक क़ौमी निज़ाम को एक आलमी निज़ाम से और एक वक़्ती
ज़ाम को एक अबदी निज़ाम से अलग करती हैं वे ये हैं कि क़ौमी निज़ाम या
एक क़ौम की बरतरी और उसके ख़ास हक़ और अधिकारों का दावेदार
ता है या अपने अन्दर कुछ ऐसे उसूल और नज़रिए रखता हो, जो दूसरी
मों में नहीं चल सकते। इसके बरख़िलाफ़ जो निज़ाम आलमी होता है वह
ाम इनसानों को बराबर का दरजा और बराबर के हक़ देने के लिए तैयार
ता है और उसके उसूलों में भी आलमगीरियत पाई जाती है। इसी तरह एक
ती निज़ाम लाज़िमी तौर पर अपनी बुनियाद कुछ ऐसे उसूलों पर रखता है,
ज़माने की कुछ पलटियों के बाद वाज़ेह तौर पर अमल के लायक़ नहीं रह
ते। इसके बरख़िलाफ़ एक अबदी (हमेशा रहनेवाला) निज़ाम के उसूल तमाम
लते हुए हालात पर फिट होते चले जाते हैं। इन ख़ुसूसियतों को निगाह में
ाकर कोई आदमी ख़ुद क़ुरआन को पढ़े और उन चीज़ों को ज़रा तय करने
कोशिश करे, जिनकी बुनियाद पर वाक़ई यह गुमान किया जा सकता हो
क़ुरआन का पेश किया हुआ निज़ाम वक़्ती और क़ौमी है।

क उलझन और उसका हल

क़ुरआन के बारे में यह बात भी एक आम पढ़नेवाले के कान में पड़ी हुई
ी है कि यह एक तफ़सीली हिदायतनामा और क़ानून की किताब है। मगर
ब वह इसे पढ़ता है तो इसमें समाज, तमद्दुन, सियासत और मईशत (अर्थ)
रह के तफ़सीली अहकाम और ज़ाब्ते उसे नहीं मिलते, बल्कि वह देखता है
नमाज़ और ज़कात जैसे फ़र्ज़ और ज़रूरी कामों के बारे में भी जिनपर
आन बार-बार इतना ज़ोर देता है, इसने कोई ऐसा ज़ाब्ता नहीं बनाया है
समें तमाम ज़रूरी अहकाम की तफ़सील मौजूद हो। यह चीज़ भी आदमी के
ा में उलझन पैदा करती है कि आख़िर यह किस माने में हिदायतनामा है।

इस मामले में सारी उलझन सिर्फ़ इसलिए पैदा होती है कि आदमी की
गाह से हक़ीक़त का एक पहलू बिलकुल ओझल रह जाता है, यानी यह कि
ह ने सिर्फ़ किताब ही नहीं उतारी थी, बल्कि पैग़म्बर भी भेजा था। अगर

असूल स्कीम यह हो कि बस तामीर का एक नक़्शा लोगों को दे दिया ज
और लोग उसके मुताबिक़ ख़ुद इमारत बना लें, तो इस सूरत में बेशक ताम
के एक-एक काम की तफ़सील हमको मिलनी चाहिए। लेकिन जब तार्म
हिदायतों के साथ एक इंजीनियर भी सरकारी तौर पर मुक़र्रर कर दिया ज
और वह उन हिदायतों के मुताबिक़ एक इमारत बनाकर खड़ी कर दे, तो पि
इंजीनियर और उसकी बनाई हुई इमारत को छोड़कर सिर्फ़ नक़्शे ही में तम
छोटी-बड़ी चीज़ों को तलाश करना और फिर उसे न पाकर नक़्शे के नामुकम्म
होने का शिकवा करना ग़लत है। क़ुरआन उसूल और बुनियादी क़ायदों औ
ज़ाब्तों की किताब है। इसमें ग़ैर-बुनियादी और छोटी-छोटी (आंशिक) ब
बयान नहीं की गई हैं। क़ुरआन का असूल काम यह है कि इस्लामी निज़ाम
फ़िक्री (वैचारिक) और अख़लाक़ी बुनियादों को अच्छी तरह वाज़ेह करके
सिर्फ़ पेश करे, बल्कि अक़्ली दलीलों और जज़्बाती अपील दोनों तरीक़ों से ख़
मज़बूत भी कर दे। अब रही इस्लामी ज़िन्दगी की अमली सूरत, तो इस माम
में वह इनसान की रहनुमाई इस तरीक़े से नहीं करता कि ज़िन्दगी के एक-ए
पहलू के बारे में तफ़सीली ज़ाब्ते और क़ानून बनाए, बल्कि वह ज़िन्दगी के
पहलू की ज़रूरी और ख़ास हदें बता देता है और नुमायाँ तौर पर कुछ जग
पर निशानी के पत्थर खड़े कर देता है, जो इस बात को तय कर देते हैं
अल्लाह की मर्ज़ी के मुताबिक़ इन शोबों (विभागों) का क़ियाम और ताम
किन लाइनों पर होनी चाहिए। इन हिदायतों के मुताबिक़ अमली तौर
इस्लामी ज़िन्दगी का नक़्शा बनाना नबी (सल्ल॰) का काम था। उन्हें मुक़र्रर
इसलिए किया गया था कि दुनिया को उस इनफ़िरादी सीरत और किरदार औ
उस समाज और हुकूमत का नमूना दिखा दें, जो क़ुरआन के दिए हुए उसू
की अमली शक्ल हो।

क़ुरआनी हुक्मों के अलग-अलग मतलब

एक और सवाल जो आम तौर से लोगों के मन में खटकता है वह यह
कि एक तरह तो क़ुरआन उन लोगों को बहुत मलामत करता है जो अल्लाह
किताब के आ जाने के बाद फ़िरक़ेबन्दी और इख़्तिलाफ़ में पड़ जाते हैं औ
अपने दीन के टुकड़े कर डालते हैं और दूसरी तरफ़ क़ुरआन के अहकाम
वाज़ेह करने और उनका मतलब समझने में सिर्फ़ बाद के लोगों में ही न
इमामों, ताबईन (सहाबा के बाद के लोगों) और ख़ुद सहाबा तक के दरम्य
इतने इख़्तिलाफ़ पाए जाते हैं कि शायद कोई एक भी अहका
(आदेश-सम्बन्धी) आयत ऐसी न मिलेगी, जिसके किसी एक मतलब या मा
पर सब एक राय हों। क्या ये सब लोग उस मलामत के हक़दार हैं, जो क़ुरआ
में की गई है? अगर नहीं तो फिर वह कौन-सी फ़िरक़ाबन्दी और इख़्तिलाफ़

ासे क़ुरआन रोकता है?

यह एक मसला है जिसके बहुत-से पहलू हैं, जिसपर तफ़सील से बात ने का यह मौक़ा नहीं है। यहाँ क़ुरआन के एक आम तालिबे-इल्म की झन दूर करने के लिए सिर्फ़ इतना इशारा काफ़ी है कि क़ुरआन उस तबख़्श राय के इख़्तिलाफ़ का मुख़ालिफ़ नहीं है, जो दीन में एक राय और ामी उम्मत में एक रहते हुए सिर्फ़ अहकाम और क़ानूनों की तफ़सीली ज़ समझने के मक़सद से मुख़लिसाना तहक़ीक़ की बुनियाद पर की जाए, क़ वह मलामत उस इख़्तिलाफ़ की करता है जो नफ़सानियत और निगाह के न से शुरू हो और फ़िरक़ाबन्दी और आपसी झगड़ों तक नौबत पहुँचा दे। दोनों तरह के इख़्तिलाफ़ न अपनी हक़ीक़त में बराबर हैं और न अपने जों में एक-दूसरे से किसी तरह मिलते हैं कि दोनों को एक ही लकड़ी से दिया जाए। पहली तरह का इख़्तिलाफ़ तो तरक़्क़ी की जान और ज़िन्दगी रूह है। वह हर उस समाज में पाया जाएगा, जो अक्ल व फ़िक्र रखनेवाले ों पर सम्मिलित है। उसका पाया जाना ज़िन्दगी की निशानी है और उससे ो सिर्फ़ वही समाज हो सकता है जो दिल और दिमाग़ रखनेवाले समझदार ानों से नहीं, बल्कि लकड़ी के कुन्दों से बना हो। रहा दूसरी तरह का लाफ़ तो एक दुनिया जानती है कि उसने जिस गरोह में भी सर उठाया टुकड़े-टुकड़े करके छोड़ा। उसका ज़ाहिर होना सेहत की नहीं, बल्कि बीमारी निशानी है और उसके नतीजे कभी किसी उम्मत के हक़ में भी फ़ायदेमन्द हो सकते। इन दोनों क़िस्म के इख़्तिलाफ़ का फ़र्क़ वाज़ेह तौर पर यूँ झए कि—

एक सूरत तो वह है जिसमें ख़ुदा और रसूल की इताअत पर जमाअत के लोग एक राय हों, इस बात पर भी सब लोग एक राय हों कि अहकाम हिदायतों का असल माख़ज़ (स्रोत) क़ुरआन और सुन्नत है और फिर दो ाम किसी ग़ैर-बुनियादी और छोटे मसले की तहक़ीक़ में या दो क़ाज़ी) किसी मुक़द्दमे के फ़ैसले में एक-दूसरे से इख़्तिलाफ़ करें, मगर उनमें से भी न तो इस मसले को और इसमें अपनी राय को दीन का दारोमदार और न इससे इख़्तिलाफ़ करनेवाले को दीन से बाहर ठहराए, बल्कि दोनों ो-अपनी दलीलें देकर अपनी हद तक तहक़ीक़ का हक़ अदा करें। और यह आम लोगों पर या अगर अदालती मसला हो तो मुल्क की आख़िरी ात पर या अगर इज्तिमाई मामला हो तो जमाअत के निज़ाम पर छोड़ दें दोनों रायों में से जिसको चाहें क़बूल करें या दोनों को जाइज़ रखें।

दूसरी सूरत यह है कि इख़्तिलाफ़ सिरे से दीन की बुनियादों ही में कर जाए या यह कि कोई आलिम या कोई सूफ़ी या मुफ़्ती या तर्जमान या

लीडर किसी ऐसे मामले में जिसको ख़ुदा और रसूल ने दीन का बुनियादी मस
नहीं बताया था, एक राय अपनाए और ख़ामख़ाह खींच-तानकर उसे दीन
बुनियादी मसला बना डाले। और फिर जो उससे इख़्तिलाफ़ करे उसको
और मिल्लत से निकल जानेवाला कह डाले और अपने हामियों का एक ज
बनाकर कहे कि इस्लाम के माननेवाले असूल में ये हैं, बाक़ी सब (बेदीन उ
जहन्नमी हैं और हाँक-पुकारकर कहे कि मुस्लिम है तो बस इस जत्थे में आ
वरना तू मुस्लिम ही नहीं है।

क़ुरआन ने जहाँ कहीं भी इख़्तिलाफ़ और फ़िरक़ाबन्दी की मुख़ालफ़त
है, उससे उसकी मुराद यह दूसरी तरह का इख़्तिलाफ़ ही है। रहा पहली
का इख़्तिलाफ़ तो इसकी बहुत-सी मिसालें ख़ुद नबी (सल्ल॰) के सामने पेश
चुकी थीं। और नबी (सल्ल॰) ने सिर्फ़ यही नहीं कि उसको जाइज़ रखा, ब
उसकी तारीफ़ भी की; इसलिए कि वह इख़्तिलाफ़ तो इस बात का पता देत
कि समाज में ग़ौर व फ़िक्र और खोज व छान-बीन और सूझ-बूझ की सलाहि
मौजूद हैं और समाज के समझदार लोगों को अपने दीन से और उसके अह
से दिलचस्पी है। और उनके दिमाग़ अपनी ज़िन्दगी के मामलों का हल दीन
बाहर नहीं, बल्कि उसके अन्दर ही तलाश करते हैं। समाज कुल मिलाकर
सुनहरे क़ायदे पर अमल कर रहा है कि उसूल में एक राय रहकर अपनी ए
भी बाक़ी रखे और फिर अपने आलिमों और ग़ौर-फ़िक्र करनेवालों को सही
के अन्दर तहक़ीक़ और इजतिहाद (यानी इस्लामी तालीम की रौशनी में
निकालने) की आज़ादी देकर तरक़्क़ी के मौक़े भी बाक़ी रखे।

'यह मेरी राय है, जाननेवाला तो अल्लाह ही है। उसी पर मेरा भरोसा
है और उसकी तरफ़ मैं रुजूअ होता हूँ।'

इस दीबाचे में उन तमाम मामलों को समेटना मेरा मक़सद नहीं है,
क़ुरआन पढ़ते वक़्त एक पढ़नेवाले के दिमाग़ में पैदा होते हैं; इसलिए कि
सवालों का ज़्यादातर हिस्सा ऐसा है जो किसी न किसी आयत या सूरा
सामने आने पर मन को खटकता है और उसका जवाब *'तफ़हीमुल-क़ुरआन'*
मौक़े-मौक़े पर दे दिया गया है। इसलिए ऐसे सवालों को छोड़कर मैंने यहाँ
उन जामेअ (व्यापक) मसलों पर बात की है, जो कुल मिलाकर पूरे क़ुरआन
ताल्लुक़ रखते हैं। पढ़नेवालों से मेरी गुज़ारिश है कि सिर्फ़ इस दीबाचे
देखकर ही इसके अधूरे होने का फ़ैसला न कर दें, बल्कि पूरी कि
(तफ़हीमुल-क़ुरआन) देखने के बाद अगर उनके मन में कुछ सवालों के ज
देने बाक़ी रह जाएँ या किसी सवाल के जवाब को वे नाकाफ़ी पाएँ, तो
उससे बाख़बर करें।

☆☆☆